चन्दामामा
अगस्त १९८२

HAVE A DATE WITH THE ADVENTUROUS
SUPER HEROES
SUPERMAN
SUPERMAN
SUPERMAN
SUPERMAN
SUPERMAN with his pal THE BOY OF STEEL IN SUPER COMICS
DC
PLUS BATMAN
SUPERMAN &
BATMAN
IN
SUPER COMICS
The New Fortnightly
DOLTON COMICS
DC
Every issue brings you
the Sagas of their Heroic exploits
Available from all news dealers
at only Rs. 1.75 a copy.

चन्दामामा

अगस्त 1982

विषय-सूची

संपादकीय	... ५		गुलाम की क़िस्मत	... ३५
सच्चा श्रोता	... ६		स्वार्थ के सब सगे हैं	... ३९
बही खाता	... ९		विद्या का महत्व	... ४३
भयंकर देश	... ११		अटारी की सीढ़ी	... ४४
आलसीपन की दवा	... १९		सन्यासी का सौदा	... ५०
अपनी बात	... २५		विघ्नेश्वर	... ५१
घर से मंदिर भला	... २७		गंधर्व राजकुमारी	... ५९
चुगलीख़ोर	... ३१		फोटो-परिचयोक्ति	... ६४

★

एक प्रति : १-७५

वार्षिक चन्दा : २१-००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

हमारे प्रिय पाठकों को यह जानकर बड़ी खुशी होगी कि चन्दामामा के सितंबर १९८२ अंक से लेकर फोटो-परिचयोक्ति प्रतियोगिता का पुरस्कार २५) रुपये से बढ़ाकर रु. ५०) कर दिया गया है। आशा ही नहीं, हमारा पूर्ण विश्वास है कि हमारे पाठक पहले से कहीं अधिक उत्साह के साथ इस प्रतियोगिता में भाग लेकर हमें अपना पूरा सहयोग देंगे।

अमर वाणी

कृपणेन समो दाता, न कश्चित् भुवि विद्यते ।
अस्पृशन्नेव वित्तानि, यः परेभ्यः प्रयच्छति ॥

[लोभी से बढ़कर कोई दाता इस लोक में न होगा दाता तो अपने हाथ से दान करता है, पर लोभी धन को छुए बिना ही दूसरों के हाथ कर देता है।]

वर्ष : ३४ अगस्त १९८२ अंक : १२

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

सच्चा श्रोता

धवलगिरि के राजा विष्णुवर्द्धन संगीत के बड़े प्रेमी थे। वे हर साल दशहरे के समय संगीत के बड़े विद्वान और गायकों को निमंत्रित कर संगीत समारोह का आयोजन करते थे। श्रोता विद्वानों को पुरस्कार देकर उनका सम्मान भी करते थे।

एक वर्ष उस समारोह में भाग लेने के लिए पड़ोसी देश से नारायण भारती नामक एक गायक आये। उन का संगीत राजा को सब से अच्छा लगा। इस पर राजा ने उसे भारी पुरस्कार देते हुए कहा—"सचमुच आप का संगीत प्रशंसनीय है! आप विश्वास रखियेगा कि आप के गीत सुनते में तन्मय हो गया!"

नारायण भारती ने राजा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और विनयपूर्वक बोले—"महाराज, आज की सभा में वैसे बड़ी संख्या में लोग हाजिर थे, फिर भी मेरे दिल को एक शंका कुरेद रही थी!"

"वह शंका क्या है?" राजा ने पूछा।

"आप ने कहा कि मेरे गीत सुनकर आप तन्मय हो गये थे; लेकिन मुझे ऐसा मालूम होता है कि आप को छोड़ कर किसी को मेरा संगीत पसंद नहीं आया। क्यों कि वे लोग मेरे गाते वक़्त गीत सुने बिना आपस में कानापूसी कर रहे थे।" नारायण भारती ने जवाब दिया।

राजा को भली भांति मालूम था कि उनकी प्रजा में उनके जैसे संगीत के प्रति अभिरुचि रखने वाले लोग नहीं हैं। इस बात से वे निराश भी थे। अब नारायण भारती की बातें सुनने पर उन्हें सचमुच बड़ा दुख हुआ।

शोभालाल गुप्त

वे सोचने लगे कि कलाओं के प्रति, खास कर संगीत के प्रति उनकी प्रजा में अभिरुचि कैसे पैदा की जाय? इस समस्या पर राजा ने गंभीरता पूर्वक विचार किया और अगले वर्ष नवरात्रि के उत्सवों के अवसर पर यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि संगीत समारोह के अवसर पर गायकों के गीत सुनकर जो व्यक्ति सबसे ज्यादा खुश होगा, उसे एक हज़ार मुद्राओं का पुरस्कार दिया जाएगा।

राजा की यह धारणा थी कि उनका मंत्री भी संगीत के प्रति अधिक अभिरुचि नहीं रखता है, इसी कारण से उन्होंने मंत्री की सलाह तक लिये बिना ढिंढोरा पिटवा दिया था।

मंत्री ने अपने नौकरों के द्वारा ढिंढोरे की बात जान ली, वह राजा से मिलकर बोला–"मैंने अभी अभी सुना है कि आप सच्चे श्रोता को एक बढ़िया पुरस्कार देने जा रहे हैं! वैसे एक हज़ार मुद्राएँ हमारे लिए कोई बड़ी बात नहीं है, मगर मेरा डर सिर्फ़ यही है कि लोगों की उतनी भारी संख्या में से हम सच्चे श्रोता का पता कैसे लगवा सकते हैं?"

"मैं जानता हूँ कि सच्चे श्रोता का पता लगाना कोई आसन बात नहीं है, फिर भी इस पुरस्कार की वजह से हमारी जनता में संगीत के प्रति अभिरुचि पैदा हो जाय, यही मेरेलिए खुशी की बात होगी।" राजा ने कहा।

उत्सव का दिन आ पहुँचा। उस साल नारायण भारती तो नहीं आये, लेकिन लगभग उनकी बराबरी कर सकनेवाले कई संगीत विद्वान उस समारोह में भाग लेने आ पहुँचे।

जब जनता को यह मालूम हुआ कि राज दरबार में एक प्रसिद्ध संगीत विद्वान गाने वाला है, तब सारा दरबार खचाखच भर गया। गायक ने अपने संगीत का आलाप शुरू किया, बस, दूसरे ही क्षण में दरबार में हाजिर हर एक व्यक्ति सर

चालन करते तालियाँ बजाते हर्ष ध्वनि करने लगा।

इसे देख राजा पहले आश्चर्य में आ गये, फिर उन्हें जनता के इस व्यवहार पर बड़ा क्रोध आया। वे सोचने लगे कि एक हज़ार का पुरस्कार पाने के लिए हर एक व्यक्ति अपने को सच्चा श्रोता साबित करने के ख्याल से यह स्वांग रच रहा है। यदि यही हाल रहा तो संगीत समारोह का सारा मजा किरकिरा हो जाएगा।

यों विचार कर राजा ने अपने निकट बैठे हुए मंत्री से परामर्श किया कि अब क्या किया जाय? इस पर मंत्री ने मंद-मंद मुस्कुराते हुए बताया कि वह इस समस्या को हल करने का उपाय जानता है, राजा बिलकुल बेफ़िक्र रहें।

इसके बाद दरबारियों को संबोधित कर मंत्री बोला–"हमारे राजा हर साल उत्तम संगीत विद्वान का चुनाव करते थे। इस साल उत्तम श्रोता का वे चुनाव करने वाले हैं। वे अच्छी तरह से जानते हैं कि सच्चे श्रोता का चुनाव कैसे किया जाता है! इसलिए गायक के गाते समय किसी भी श्रोता को तालियाँ बजाना और सर हिलाना बिलकुल मना है। जो लोग राजा के इस आदेश का पालन नहीं करते, उनके सर उड़ा दिये जायेंगे।

इस पर श्रोताओं ने सर हिलाना बंद किया। मगर एक व्यक्ति बराबर सर हिलाता ही रहा।

मंत्री ने उसकी ओर क्रोध भरी नज़र दौड़ाकर पूछा–"क्या तुम्हें अपने सर उड़ जाने का ड़र नहीं है?" इस के जवाब में वह श्रोता बोला–"मधुर संगीत को सुनते वक्त तन्मयता में आकर जो सर नहीं हिलता उसके रहने या उड़ जाने में क्या फ़र्क पड़ता है?"

इस पर मंत्री ने राजा की ओर मुड़कर निवेदन किया–"महाराज, इस साल सन्मान करने लायक़ श्रोता हमें मिल गया है।" इस पर राजा के साथ संगीत के विद्वान ने भी मंदहास किया।

बही खाता

महाजन शोभागुप्त का इकलौता पुत्र श्यामगुप्त है। श्यामगुप्त जब पच्चीस साल का हो गया, तब शोभागुप्त ने अपने व्यापार की जिम्मेदारी श्यामगुप्त के हाथ सौंपनी चाही। एक दिन शोभागुप्त ने अपने कर्जदारों की बही का खाता श्यामगुप्त को दिखाकर समझाया कि किस किस से कितने रुपये मिलने हैं, किसने कितना कर्ज चुकाया हैं; फिर अचानक किसी बात की याद करके बोला—"बेटा, हमें इसी वक्त सोमवर गाँव जाना है।"

श्यामगुप्त की समझ में न आया कि उसका पिता अचानक सोमवर जाना क्यों चाहते हैं? यह बात उसने अपने पिता से पूछी, इसके जवाब में शोभागुप्त ने कहा—"सोमवर के साथ हमें रामवर भी जाना होगा। हमारे लौटने तक तुम हमारी यात्रा और उन गाँवों में मेरे व्यवहार के बारे में भी नाना प्रकार के सवाल पूछ कर मुझे तंग न करो।"

बाप-बेटे जब सोमवर पहुँचे, तब सीधे वे राम राहाय नामक एक धनी किसान के घर गये, राम सहाय ने शोभागुप्त को देखते ही पूछा—"आप किसी खास काम से तो नहीं आये?"

"वैसे कोई ख़ास बात नही है, रामवर जाते यूँ ही इधर चला आया। हाँ, सोचा कि आप के क़र्ज की बात भी याद दिलाते जाऊँ। अब तक आपने मासिक किश्तों पर चार हज़ार रुपये चुकाये, अब सिर्फ़ पाँच हज़ार बाकी रह गये हैं। यह रक़म भी जहाँ तक हो सके, जल्दी चुकाना अच्छा होगा।" शोभागुप्त ने कहा।

शोभागुप्त की बातें सुन राम सहाय गुस्से में आया और बोला—"श्यामगुप्तजी, उम्र के बढ़ने के साथ लगता है कि आप

राम मनोहरलाल

का दिमाग भी खराब होता जा रहा है। मैंने अब तक किश्तों में पांच हज़ार रुपये चुकाये हैं, अब सिर्फ़ तीन हज़ार रुपये ही देने हैं, आप शायद किसी और आदमी का क़र्ज मेरे सर मढ़ना चाहते हैं।"

शोभागुप्त चुटकी बजाकर बोला– "भाई साहब, बुरा न मानो, यह तो माधव महतो का क़र्ज है! भूल से मैंने गलत बताया!"

इस के बाद बाप-बेटे रामसहाय से विदा लेकर रामवर पहुँचे। वहाँ पर जमुना प्रसाद नामक किसान के घर पहुँच कर शोभागुप्त ने कहा–"जमुना प्रसादजी, तुमने अपने कर्ज में से अब तक दो हज़ार चुकाये, बाकी चार हज़ार रुपये कब तक चुकाने वाले हैं?"

जमुना प्रसाद बिगड़कर बोला–"गुप्तजी, मैंने अब तक तीन हज़ार रुपये चुकाये हैं! अब व्याज के साथ कुल तीन हज़ार पांच सौ रुपये आप को मिलने हैं। अगले महीने में सारी रक़म एक साथ चुका दूंगा!"

झट शोभागुप्त अपनी गलती महसूस करने वाले जैसे स्वांग रचकर बोला– "जमुना प्रसादजी, मैंने गलती से माधव महतो का हिसाब तुम से बताया। तुम्हारा कहना बिलकुल सही है।"

इसके बाद शोभागुप्त अपने पुत्र को साथ लेकर घर लौटा। इसपर श्यामगुप्त ने अपने पिता से पूछा–"पिताजी, आप तो बिना बही-खाता देखे पल भर में सब का हिसाब सही ढंग से बताते हैं। लेकिन आज आपने यह गलती कैसे की?"

शोभगुप्त हँसकर बोला–"बेटा, माधव महतो और जमुना प्रसाद के क़र्ज का हिसाब कहीं खो गया है। यह बात उन्हें मालूम होने पर हम उनसे एक कौड़ी भी वसूल नहीं कर सकते! इसीलिए मैंने बड़ी युक्ति के साथ उन लोगों के मुँह से हमारा हिसाब कहलवाया कि उनसे हमें कितने रुपये मिलने हैं और कितने रुपये चुकाये हैं? तुम जल्दी एक और बही खाता खोलकर हिसाब लिख दो।"

[१]

[शिवदत्त सुरंगवाले गुप्त द्वार से जब भागने लगा, तब उसके दूसरे छोर पर नरवाहन के सैनिकों ने उसे घेर लिया। उस लड़ाई में शिवदत्त के कुछ अनुचर अपनी जान खो बैठे। पर शिवदत्त ने दुश्मन के प्रमुख सरदार का सामना करके उसे मार डाला, इस पर बाक़ी सैनिक हिम्मत खोकर इधर-उधर ताकने लगे।]

मंदरदेव शिवदत्त की बातों को टोकते हुए बोला–"शिवदत्त, मैं समझता हूँ कि प्रारंभ से ही क़िस्मत तुम लोगों का साथ दे रही है, वरना तुम लोग इतने सारे खतरों से बच न निकलते।"

इसके जवाब में शिवदत्त मुस्कुराकर बोला–"इस में कोई शक नहीं है। मैं ने कभी कल्पना तक न की थी कि गुप्त द्वार के दूसरे छोर पर इतने सारे शत्रु सैनिक घेरे होंगे। लेकिन ख़ुश क़िस्मत की बात थी कि शत्रु सैनिकों का सरदार जब मेरी तलवार का शिकार हो गया, तब हिम्मत खोनेवाले दुशमन के सैनिकों का अंत करने में मुझे ज्यादा वक़्त न लगा। पर मुझे बाद को ही पता चला कि उनमें से दो-चार दुश्मन के सैनिक हमारी आँख बचाकर किसी तरह झाड़ियों के पीछे छिपते यहाँ से भाग गये हैं।

एक घोड़ा घायल होकर पीड़ा के मारे छटपटा रहा था। एक सैनिक घोड़े के पैरों के नीचे आकर खूब घापल हो चुका था, मैं ने उसे बाहर खिचवाया, वह अंतिम साँसें गिन रहा था। पानी मँगवाकर उसे मैंने पानी पिलवाया। समरसेन के संबंध में कुछ खास बातें मैं उसी के जरिये जान सकता था।

अपनी प्यास बुझा कर शत्रु सैनिक जब थोड़ा आस्वस्थ हुआ, तब मैं ने उस से समरसेन के बारे में पूछा। मेरा सवाल था– 'क्या इस वक़्त समरसेन जिंदा है या नहीं?"

असहनीय पीड़ा का अनुभव करने वाला वह सैनिक मेरी ओर दीन दृष्टि दौड़ा कर बोला–"समरसेन चार-पाँच घंटों के पहले ही हिम्मत के साथ लड़ते लड़ते उस लड़ाई में मर गये हैं। इस वक़्त इस टापू का राजा नरवाहन है।"

"तो क्या मैं यक़ीन कर लूँ कि लाड़ाई में समरसेन के घायल हो जाने की बात सच है?" मैं ने पूछा।

"हाँ, यह बात बिलकुल सच है।" ये शब्द कहते वह जमीन पर लुढ़क पड़ा और उसने सदा के लिए अपनी आँखें बंद कर लीं।

यह भावना मेरे दिल पर गहरी चोट कर गई कि 'महा सेनापति समरसेन अब प्राणों के साथ नहीं हैं।' वे एक महान वीर कहलाये और वीर गति को प्राप्त हुए। सर्व शक्तिमान ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे, यही प्रार्थना मैंने ईश्वर से की।

कुंडलिनी देवी की कृपा से मैं प्राणों के साथ बच निकला। अब मेरा कर्तव्य क्या है? दुश्मन के साथ हुई लड़ाई में मेरे छे अनुचर काम आये। यदि तुरंत उस प्रदेश को छोड़कर मैं अपने सारे अनुचरों के साथ भाग न जाऊँ तो वहाँ पर नरवाहनमिश्र के कुछ और सैनिकों के आ जाने की संभावना है।

में अपने सारे अनुचरों को एक जगह इकट्ठा कर उन्हें सही हालत समझा दी, इस पर सब लोग इस बात से पूर्ण सहमत हो गये कि आज नहीं तो किसी न किसी दिन हमें इस टापू को छोड़ कर चले जाना होगा। क्योंकि समरसेन की मृत्यु के बाद अब उस टापू भर में नरवाहनमिश्र का सामना करने की ताक़त रखनेवाला कोई रह नहीं गया था।

यही सब विचार कर मैंने अपने मृत अनुचरों को एक ही जगह दफ़ना दिया, बाकी को साथ लेकर घने जंगल की ओर चल पड़ा। एक दो कोस की यात्रा के बाद हमें एक भील बस्ती दिखाई दी। सैनिकों की पोशाक व हथियारों से लैस हमें देखते ही भील बस्ती के छोटे-बड़े सभी लोग दौड़ते आ पहुँचे और हम लोगों को घेर लिया।

"हम लोग तुम्हारे दुश्मन नहीं हैं; मुझे यह बतला दो कि इस बस्ती के नेता कौन हैं? मुझे उन से बात करनी है।" मैं ने पूछा।

पाँच-दस मिनटों के अन्दर एक वृद्ध हमारे पास आया और मुझसे पूछा—"क्या मैं यह जान सकता हूँ कि आप कौन हैं? यहाँ पर किस काम से आये हैं?"

मैं अपने अनुचरों को उसे दिखाते हुए बोला—"हम लोग आप के दुश्मन नहीं हैं। हमारा सारा समाचार इतमीनान से सुनाऊँगा; इससे पहले आप कृपया मेरी बात सुन लीजिए—ये सब बड़े प्यासे हैं, कल से कुछ खाया भी नहीं है। क्या आप खाने का इंतजाम कर सकते हैं?'

वृद्ध ने मेरी बातें सुनते ही बाक़ी भीलों की ओर देखा। दूसरे ही पल में मेरे एक-एक अनुचर को एक-एक भील अपने घर लिवा ले गया। मैं उन जंगली लोगों के अतिथि-सत्कार की भावना पर चकित रह गया। वृद्ध मेरी ओर देख हंसते हुए बोला—"आप मेरे घर चले आइये;

आप के खाने-पीने का इंतजाम मैं खुद कर देता हूँ।"

मैं वृद्ध के साथ उस के घर पहुँचा। आध घंटे के अन्दर मुझे मिस्ठान्नों के साथ बढ़िया भोजन परोसा गया। मेरे खाना समाप्त होने तक वृद्ध ने मेरे साथ किसी प्रकार की बातचीत न की, मगर मैं उनकी दृष्टि को बराबर भांप रहा था। उसकी अंगारों जैसी आँखें मेरी ओर अपनी प्रखर दृष्टि डाले हुए थीं। वह धीमी आवाज में बोला–"हम तो भील वंशी हैं। ये ही महान अरण्य हमारी संपत्ति हैं। मेरे पूर्वजों ने या हमारी पीढी के लोगों ने भी किसी राजसत्ता के सामने आज तक सर नहीं झुकाया है।"

मैं सिर्फ़ सर हिला कर मौन रह गया। वृद्ध जो कुछ कहना चाहता था, उसका थोड़ा अंश भी मैं समझने की कोशिश करके समझ न पाया।

पर उसने अपनी बातें चालू कीं–"देश में इस वक़्त खतरनाक जो परिवर्तन हो रहे हैं उनका पता हमें चलता ही रहता है। आप लोगों में से कुछ ने हमारी जाति के युवकों को बड़े बड़े प्रलोभन देकर अपने पक्ष में करने के काफी प्रयत्न भी किये हैं। भीलों के सरदार के रूप में मैं उन प्रयत्नों को विफल बनाता रहा। इस वक़्त मैं जानना चाहता हूँ कि सैनिकों की पोशाक में आप लोगों का इस जंगली प्रदेश में प्रवेश करने का मतलब ही क्या है?"

तब जाकर वृद्ध की शंका मेरी समझ में आ गई । मैं ने सोचा कि उस की शंकाओं का निवारण करना हो तो हमारे बारे में पूरे विवरणों के साथ उसे यथार्थता का बोध कराना आवश्यक है ।

इस के बाद मैं ने भीलों के सरदार को वे सारी बातें सुनाईं कि जादू के द्वीप में कैसे समरसेन के साथ मेरा परिचय हुआ और तदनंतर कुंडलिनी द्वीप में क्या क्या परिवर्तन हुए और आखिर नरवाहन मिश्र ने हमारे साथ कैसे विश्वासघात किया, आदि । ये सारी बातें सुन कर भील सरदार मेरी आँखों में तीक्ष्ण दृष्टि प्रसारित कर बोला–"इस का मतलब यही निकलता है कि इस वक़्त इस देश पर जिसने अपना अधिकार जमाया है, उस के आप दुश्मन हैं ।"

"जी हाँ ।" मैं ने कहा ।

वृद्ध सर झुकाये थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर बोला–" तब तो आप लोग इस जंगली प्रदेश को अपना निवास बना कर मौक़े पर नरवाहन पर चढ़ाई करने की बात सोच रहें है ?"

"यह ख़्याल हम बिलकुल नहीं रखते ?" मैंने झट जवाब दिया ।

शायद भील सरदार मेरा जवाब सुन कर संतुष्ट हो गया था । वह उठ कर मेरे निकट आया, मेरे दोनों हाथ पकड़ कर बोला–"अगर मैं ने मेरे सवालों के जरिये आप के दिल को दुखाया हो तो मुझे माफ़
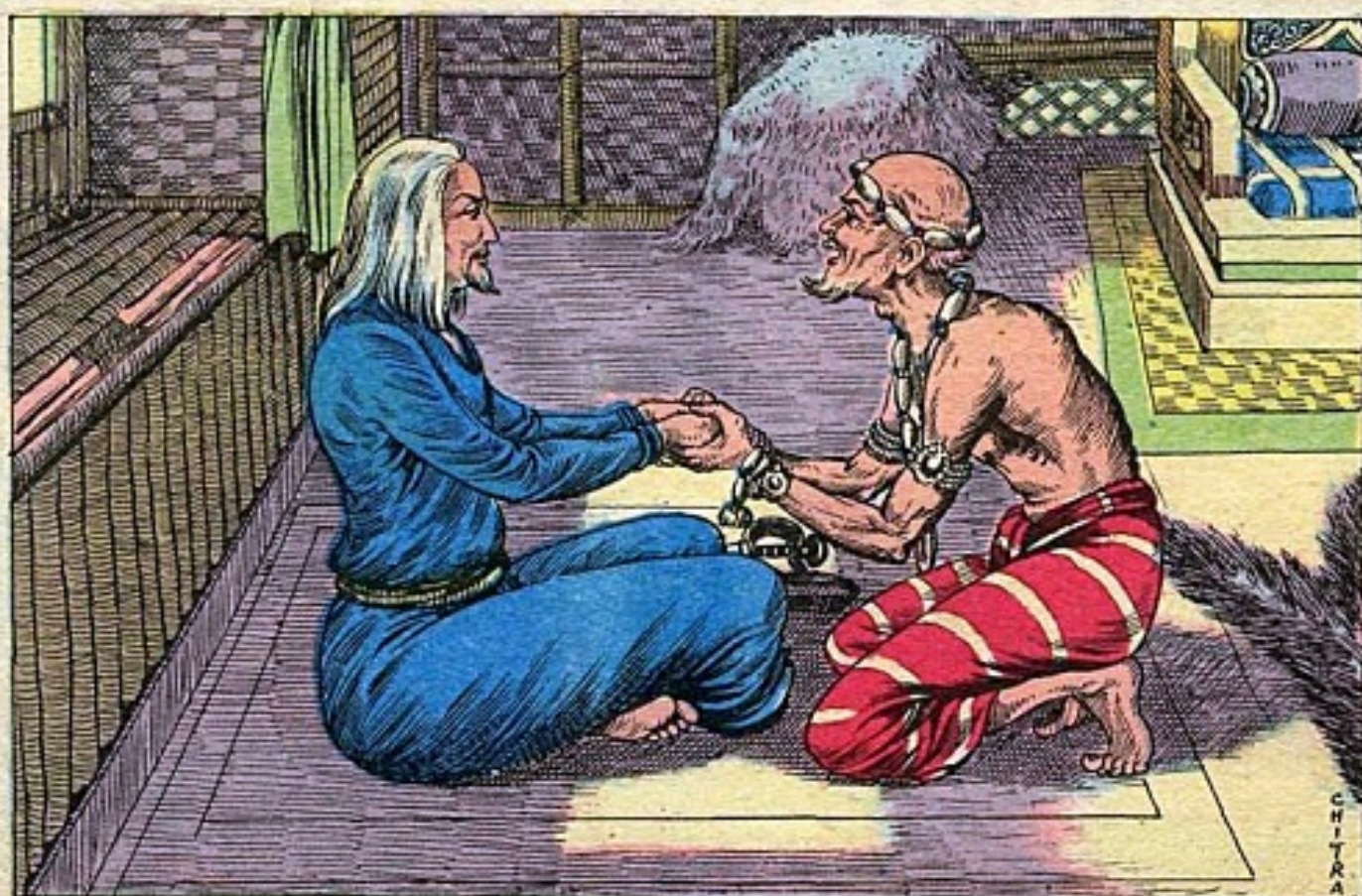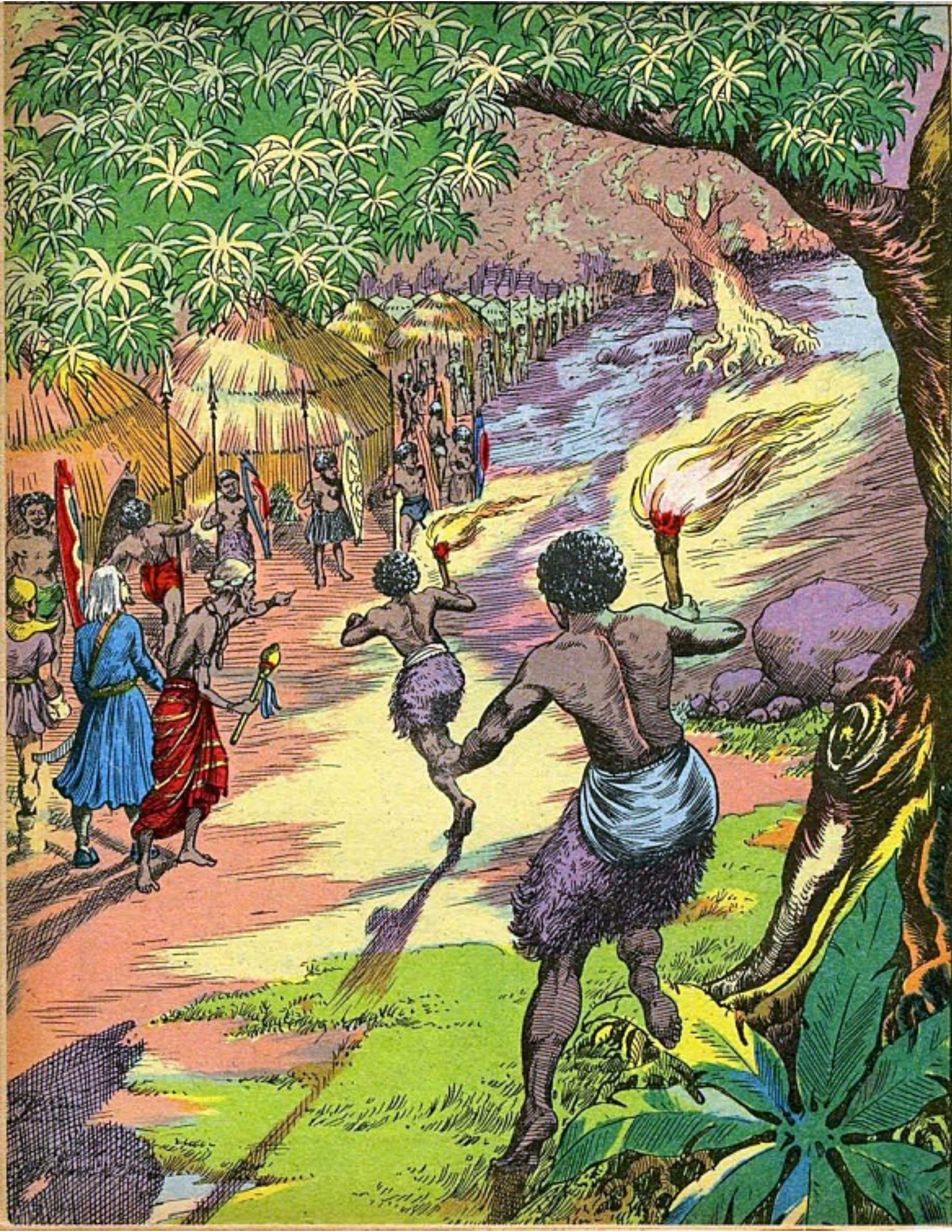
कीजिए। आप यदि इस द्वीप को छोड़ कर जाना चाहे तो इस के वास्ते जरूरी मदद मैं दे सकता हूँ। आप लोगों से सिर्फ़ मेरा यही निवेदन है कि यह जंगली प्रदेश इस वक़्त एक दम शांत है, इसलिए आप लोग मेहर्बानी करके हमारी जिंदगियों में खलबली न मचावे। आप लोग यहाँ से राज्य के शासकों के विरुद्ध किसी भी तरह का विद्रोह करे, तो वह हमारे जंगली प्रदेश की अशांति का कारण बन सकता है।"

उस दिन रात को मैंने अपने सारे अनुचरों को एक जगह इकट्ठा किया और सच्ची हालत उन्हें बताई। सबने इस बात को मान लिया कि नरवाहन की आँख बचाकर इस प्रदेश में हम लोग थोडे दिन छिप कर रहें और मौक़ा मिलते ही इस द्वीप को छोड़ कर चले जायें। मगर उसी दिन रात को हमारे संकल्प के विरुद्ध एक घटना घटी।

भील बस्ती के बाहर पेड़ों के नीचे मैं और मेरे अनुचर सोने की तैयारी कर रहे थे। हम से थोड़ी दूर पर कुछ भील युवक जंगली जानवरों से हमारी रक्षा करने केलिए शोले जला कर उनके चारों तरफ लेट गये। ठीक आधी रात के वक़्त अचानक ढफलियों की आवाज तथा एक जगह जंगल के जलने की रोशनी दिखाई दी।
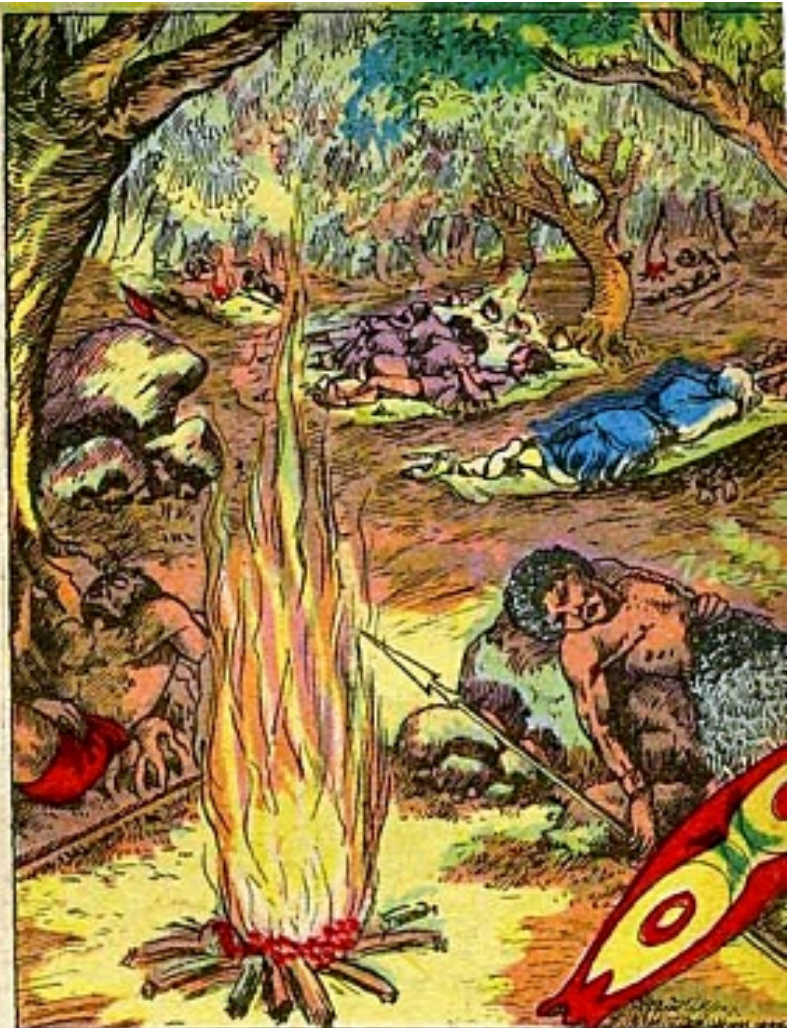
हमें आश्रय देनेवाली भील बस्ती पल भर में निद्रा से जाग उठी। बस्ती के वृद्ध सरदार ने युवकों को आदेश दिया कि वे ढाल और तलवार लेकर बस्ती के चारों तरफ़ पहरा दे। कुछ युवकों के हाथ मशाल देकर भील बस्ती के वृद्ध नेता ने ढफलियों की आवाज़ आने की दिशा में भेज दिया।

"यह हो-हल्ला कैसा?" मैंने वृद्ध से पूछा।

वृद्ध सर झुकाये ही रहा, गंभीर स्वर में बोला—"कुछ भी हो सकता है। हो सकता है कि हाथियों के झुण्ड बस्तियों पर हमला करके उनको तहस-नहस करते हो या कोई दूसरी जंगली जाति हमारी थोड़ी सी

संपत्ति–मवेशी आदि को लूटने के लिए हम पर चढ़ाई कर बैठे हो। मगर यह बात मुझे अचरज में डाल रही है।" यों कहते वृद्ध ने जलने वाले जंगल की ओर उंगली का इशारा किया।

"यह सब मेरे तथा मेरे अनुचरों की खोज करने के वास्ते नरवाहन मिश्र के सैनिकों के द्वारा की गई चढ़ाई तो नहीं?" बिजली की भांति यह शंका मेरे दिमाग में कौंध गई।

इतने में चार-पांच भील युवक चिल्लाते हमारे पास पहुंचे। वहाँ पर वे अपने सरदार को देख बोले–"हमारी बस्तियों पर हमला करके सैनिक सर्वनाश कर रहे हैं। उनमें से कुछ लोग जान-बूझ कर जँगल में आग लगा रहे हैं।"

"ऐसी बात तो आज तक कभी हुई नही है न? दर असल वे लोग चाहते क्या हैं? भील सरदार ने पूछा।

इस बीच वहाँ पर नरवाहन के पक्ष के एक सैनिक के हाथ बांध कर दो भील युवक उसे हमारे निकट ले आये।

"सरदारजी, आप इससे पूछ लीजियेगा। यह सारी बातें आप को सुना देगा। यह कहता है कि जंगल का यह सारा प्रदेश इसके नेता सुबाहु का है।" यों कहते दोनों युवकों ने लाठियों से उस सैनिक की पीठ पर दो तीन दफे चुभो दिया।

भील बस्ती के सरदार ने मेरी ओर नज़र दौड़ाई, फिर उस बंदी सैनिक से पूछा–"क्या मेरे अनुचरों का कहना सच है? यह बताओ कि सुबाहू नामक तुम्हारे नेता को जंगल का यह सारा प्रदेश किसने सौंपा है?"

"हमारे नेता ने लड़ाई में महाराजा नरवाहन की मदद पहुंचाई थी। इसलिए बदले में राजा ने यह सारा प्रदेश उन्हें दान दिया है। इस प्रदेश में जीने वाले सारे पशु, पक्षी और मनुष्य आज से हमारे नेता के अधीन आ गये हैं। इस प्रदेश पर क़ब्जा करने के लिए हम लोग हमारे सरदार के द्वारा यहाँ पर भेजे गये हैं।" सैनिक ने जवाब दिया। (और है)

आलसीपन की दवा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मेरा विश्वास है कि आप जैसे दृढ़ व्रती इस दुनिया में बहुत कम लोग होते हैं! अपने निजी कार्य साधने के साथ दूसरों के हितकारी कार्य करने के लिए भी बड़ी लगन की जरूरत है! मगर यह बात सभी मामलों में सच नहीं होती कि दूसरों के द्वारा हित पाने वाले लोग अपने हितैषियों को बहुत दिन तक याद रखकर उनके प्रति कृतज्ञ होते हैं। इस प्रकार अपने हित की बात भूल जाने पर एक परोपकारी व्यक्ति मानसिक दृष्टि से कैसे दुखी हो गया था, उसकी कहानी मैं आपको सुनाता हूँ। आप अपने श्रम को भुलाने के लिए उसे सुनिये।"

वेताल कथाएं

बेताल यों सुनाने लगा : विश्वनाथपुर नामक एक गाँव में गणपति शर्मा नामक एक गृहस्थ था। उसके पास बड़ी भारी पैतृक संपत्ति थी। उसके तीन बच्चे थे। उसकी ज़िंदगी आराम से गुजर रही थी। यथाशक्ति वह दूसरों की मदद किया करता था। उस गाँव के कई लोगों ने गणपति शर्मा से मदद पाई थी।

गणपति शर्मा के लिए वैसे कोई काम करने को न था। खेत का काम देखने के लिए उसके यहाँ कई काश्तकार थे। रसोई बनाकर खिलाने को पत्नी थी ही। घर के छोटे-मोटे काम संभालने के लिए नौकर-चाकर थे। साथ ही वह बड़ा आलसी था, इस वज़ह से गणपति शर्मा अपने मकान के बाहर चबूतरे पर बैठकर रास्ते में आने-जाने वाले लोगों को देखा करता था।

गणपति शर्मा का मकान गाँव के बीचों बीच था। इस कारण रास्ते में हमेशा लोगों की भीड़ लगी रहती थी। गणपति शर्मा आराम कुर्सी पर बैठकर रास्ते से गुजरने वालों में से किसी न किसी व्यक्ति के साथ बातचीत किया करता था। जिसके पास फ़ुरसत न होती, वे उसकी ओर नजर दौड़ाकर मुस्कुरा देते और चल पड़ते।

एक दिन गणपति शर्मा ने चन्द्रशेखर को पुकारा। वह किसी जरूरी काम से निकल रहा था, इस कारण गणपति शर्मा की पुकार पर कोई ध्यान न दिया। चन्द्रशेखर ने छे महीने पहिले गणपति शर्मा से पच्चीस रुपये उधार लिया था, अब तक उसने एक भी रुपया चुकाया न था और गणपति शर्मा ने कभी उससे मांग भी न की थी। जब भी वह गणपति शर्मा को देखता, तुरंत विनयपूर्वक प्रणाम करके चला जाता, लेकिन उस दिन गणपति शर्मा के पुकारने पर भी कोई ध्यान न दिया।

इस पर गणपति शर्मा ने सोचा—"लोग तो बड़े ही कृतघ्न होते हैं! दूसरों से मदद पाकर भी उसे भूल जाते हैं!"

इसके थोड़ी देर बाद उस रास्ते पर एक घोड़ा गाड़ी आ रुकी। गाड़ी से उतरने वालों को गणपति शर्मा ने दूर से ही पहचान लिया। वे थे–लक्ष्मी और उसका पति वीरवर्मा।

गणपति शर्मा ने ही लक्ष्मी और वीर वर्मा की शादी का रिश्ता तै किया था। वीर वर्मा के परिवार के लोग ज्यादा दहेज़ मांग रहे थे, इस पर गणपति शर्मा ने दख़ल देकर लक्ष्मी के गुणों का बखान किया और उस रिश्ते को टूटने से बचाया।

लक्ष्मी ने अपने ससुराल जाते वक़्त गणपति शर्मा से कहा था–"काकाजी, मैं आपके ऋण को ज़िंदगी भर चुका नहीं सकती।"

रास्ता पार करके गली में मुड़ने पर लक्ष्मी का मकान पड़ता था। पति-पत्नी बातचीत करते जब शर्मा के घर के सामने पहुँचे, तब शर्मा ने पूछा–"लक्ष्मी, क्या तुम अभी अभी ससुराल से आती हो?"

लक्ष्मी ने गणपति शर्मा को न देखा। वह अपने पति के साथ शर्मा के घर पार कर गई। इस पर शर्मा का दिल कचोट उठा। वह मन ही मन गुनगुनाने लगा–"उफ़! लोग दूसरों के द्वारा उपकार पाकर भी इतनी जल्दी कैसे भूल जाते हैं!"

इसके थोड़ी देर बाद उस रास्ते से गुजरते एक अध्यापक दिखाई दिया। दर असल गणपति शर्मा ने उसे अपने घर में आश्रय देकर एक पाठशाला खुलवा

दी थी। धीरे-धीरे अध्यापक ने अपना एक मकान भी बनवा लिया। उस वक़्त भी शर्मा ने उसे थोड़ी-बहुत मदद पहुँचाई थी।

"अध्यापकजी, रुक जाओ! यह जल्दी कैसी?" गणपति शर्मा ने टोका।

अध्यापक पल भर रुककर बोला–"अजी, त्योहार नजदीक़ आ रहा है न! जल्दी कैसे न होगी? कभी फ़ुरसत के वक़्त आकर मिलूँगा।" यों जवाब देकर अध्यापक चला गया।

इस पर गणपति शर्मा यह सोचते मन ही मन दुखी होने लगा कि मेरे साथ थोड़ी देर बातचीत करने की बात उठेगी तो सबको जल्दी आ पड़ती है। उसी वक़्त उस रास्ते से गुजरने वाला बनिया रुका और बोला–"शर्माजी, राम! राम!"

बनिये का पड़ोसी गाँव में दिवाला पिट चुका था, तब वह इस गाँव में आया था। गणपति शर्मा ने ही उसे रुपये उधार देकर फिर से दूकान खुलवा दी थी। थोड़े दिन बाद बनिये की क़िस्मत खुल गई। इस वक़्त वह दोनों हाथ कमा रहा था।

"भाई, थोड़ी देर बैठ जाओ! कहो, बात क्या है?" गणपति शर्मा ने पूछा।

"आराम से बैठ जाना आप जैसे लोगों के लिए ही संभव है! हाथ-पांव चलाये बिना हम जैसे लोगों के दिन कैसे गुज़र सकते हैं साहब! दिखाई दिये, इसलिए मैंने दण्ड-प्रणाम किया, बस यही बात है।" बनिया तड़ाक से जवाब दे बैठा।

"इसको तो मेरे रुपये की ज़रूरत है। मगर थोड़ी देर बैठकर मेरे साथ बातचीत करना इसको बिलकुल पसंद नहीं है!" गणपति शर्मा ने अपने मन में सोचा।

इस प्रकार गणपति शर्मा चबूतरे पर बैठकर रोज उस रास्ते से गुजरने वालों को पुकारता, वे उसका ख्याल किये बिना चले जाते, यह तो एक परिपाटी सी हो गई। इस पर दुखी हो गणपति शर्मा दिन ब दिन कमजोर होता गया। वैद्य ने आकर जांच की और बताया कि गणपति

शर्मा की तबीयत बिलकुल ठीक है। शर्मा की पत्नी ने कई प्रकार से पूछा कि आखिर बात क्या है? मगर शर्मा अपनी इस कमजोरी का असली कारण बता नहीं पाया। इस पर शर्मा की पत्नी ने पड़ोसी गाँव में रहने वाले अपने भाई रमणराव के पास खबर भेजी। रमणराव दूसरे ही दिन शर्मा के गाँव आ पहुँचा।

शर्मा की पत्नी ने अपने भाई को अपना सारा दुखड़ा सुनाया—"भैया, इधर कुछ दिनों से ये बराबर कमज़ोर होते जा रहे हैं! इनकी बीमारी का पता वैद्य भी लगा नहीं पा रहे हैं!"

रमणराव बड़ा ही अक़्लमंद था। उसने गणपति शर्मा से कई सवाल पूछे, मगर उसे भी बीमारी का पता न चला। उसने गणपति शर्मा की दिनचर्या के बारे में पूछा। आखिर रमणराव ने समझ लिया कि शर्मा जब चबूतरे पर बैठ जाता है, तभी मानसिक दृष्टि से घुलता जा रहा है।

दूसरे दिन शर्मा के साथ रमणराव भी चबूतरे पर जा बैठा। शर्मा रास्ते से गुजरने वालों के बारे में किस्से सुनाते, इस बात की याद करके दुखी होने लगा कि उसने विपदा के वक़्त किस किस की कैसी मदद की है।

रमणराव ने इतमीनान से कहा—"बहनोई साहब, आपका कहना सच है। जानते हैं कि सब कोई आपकी परवाह क्यों नहीं करते? इस दुनिया में आलसी आदमी की कोई क़दर नहीं करते। आप जिस संपत्ति द्वारा दूसरों की मदद करते हैं, वह आपकी गाढ़ी कमाई नहीं है। वह तो पैतृक संपत्ति है। हो सकता है कि कुछ लोग यह मानते हो कि आप धन का मूल्य नहीं जानते, इसलिए दूसरों की मदद करते हैं! इसलिए आज से ही सही आप मेहनत करने की आदत डाल लीजियेगा!"

शर्मा को शायद उसके साले रमणराव की सलाह पसंद आई होगी! उस दिन से शर्मा ने अपने निजी काम दूसरों से न कराकर खुद करना शुरू किया। रोज

वह खेत में जाने लगा। सुबह नींद से जागने से लेकर रात के सो जाने तक वह कोई न कोई काम करता रहा।

थोड़े ही दिनों में शर्मा की तबीयत सुधर गई। उसे लगा कि गाँव के लोग पहले से कहीं ज़्यादा उसकी इज़्ज़त करने लगे हैं।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, गणपति शर्मा से मदद पानेवाले लोगों के व्यवहार के प्रति मेरे मन में थोड़े संदेह हैं। शर्मा के आलसीपन के बारे में उन्हें मतलब ही क्या है? उसकी परोपकारी वृत्ति को पहचान कर उसका आदर करने से उन लोगों का बिगड़ता क्या है? शर्मा के आलसीपन के द्वारा दर असल उन लोगों की हानि क्या होती है? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया– "गणपति शर्मा के प्रति गाँव के लोगों की राय सदा एक ही प्रकार की रही है। उनके उत्तम व्यवहार और दानशीलता के प्रति उनके दिलों में आदर का भाव हमेशा रहा है। यह बात वे लोग शर्मा से बातचीत करते वक़्त बराबर प्रकट करते रहे हैं। मगर शर्मा ने बेकार ही चबूतरे पर बैठकर नाहक़ कुछ मानसिक उलझनें खुद पैदा कर ली हैं! जो फ़ुरसत के साथ बैठा रहता है, उसके दिल और दिमाग बड़े ही खतरनाक होते हैं! वह तो अनावश्यक दुश्मनों को पैदा करता है! इस असलियत को भांपकर ही शर्मा के बहनोई ने उसे चबूतरे पर से उठवा दिया और खेत तथा दूसरे कामों में उसका वक़्त बिताने लायक़ कर दिया। इस तरह गणपति शर्मा ने जो मानसिक गुत्थियाँ स्वयं पैदा कर ली थीं, उनसे वह बिलकुल मुक्त हुआ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो फिर से पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

अपनी बात

गोविंद और माधव किसान थे। अड़ोस-पड़ोस में रहते थे। खेतीबाड़ी से लेकर हर छोटे-मोटे काम में वे एक दूसरे की मदद करते अपने दिन आराम से बिताते थे। उनकी दोस्ती सारे गाँव के लिए आदर्शप्राय थी।

एक दिन अचानक वे दोनों झगड़ पड़े। आखिर एक दूसरे को गालियाँ देते मार-पीठ तक करने लगे। इसे देख सारे गाँववाले अचरज मे आ गये। उनके चारों तरफ़ भीड़ लग गई। लोगों ने उनके झगड़ने का कारण जानने और उन्हें शांत करने की बड़ी कोशिश की।

सबके समझाने-बुझाने के बावजूद भी व शांत नहीं हुए। बराबर एक दूसरे को गालियाँ देते मारने-पीटने को झपट पड़ते थे। लोगों की समझ में न आया कि क्या किया जाय। उसी वक़्त एक बूढ़ा वहाँ पर आ पहुँचा। उसकी दाढ़ी लंबी व सफ़ेद थी। उसके चेहरे पर एकदम शांति झलक रही थी। उस बूढ़े के शांत वदन को देख गोविंद और माधव सहम गये। शांतिपूर्वक अर्ध निमीलित नेत्रों के साथ उनकी ओर देखते नज़र दौड़ाने वाले वृद्ध को गोविंद और माधव ने विनयपूर्वक प्रणाम किया। वे उस वृद्ध को अपने झगड़े का कारण सुनाने लगे।

वृद्ध ने हाथ के संकेत के साथ दोनों को चुप रहने का आदेश दिया। इसके बाद वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों को संबोधित कर बोला–"सच बात तो यह है कि एक दूसरे पर नाराज़ हो जाना अपराध है, तिस पर झगड़ना और मार-पीट करना महान अपराध है। मुझे झगड़े का कारण बताने की ज़रूरत नहीं है। चाहे कोई दूसरे को जितना भी छेड़े, उस पर नाराज़ हो जाना मानव का लक्षण नहीं है!"

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

वृद्ध के मुंह से ये बातें सुनकर गोविंद और माधव के साथ सभी लोग चकित रह गये। चार-पांच मिनटों तक वहां पर शांति छाई रही। इतने में भीड़ में से एक युवक आगे आया और बूढ़े के सामने जाकर बोला–"महाशय, किसी भी हालत में नाराज़ न होना मानव के लिए मुमकिन नहीं है!"

वृद्ध ठहाके मारकर हँस पड़ा और अपनी लंबी व सफ़ेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोला–"क्यों नहीं? मैं अपनी ही बात बता देता हूँ! कोई भी किसी हालत में मुझे नाराज़ होने नहीं दे सकता! मानव क्या, आख़िर देवता और राक्षस भी!"

वृद्ध को टोकने वाले युवक पर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाकर, वृद्ध को प्रणाम करके लोग एक-एक करके वहाँ से चले गये। युवक ने वृद्ध के समीप जाकर कहा–"दादाजी?"

"बात क्या है?" वृद्ध ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"दादाजी!" युवक ने फिर वही बात दुहराई।

"बताओ, बेटा! बात क्या है?" वृद्ध ने इस बार गंभीर होकर पूछा।

"दादाजी!" युवक ने फिर एक बार पुकारा।

"बताओ, क्या कहना चाहते हो?" वृद्ध ने क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाकर पूछा।

"दादाजी!" युवक ने विचलित हुए बिना फिर पूछा।

"अरे कमबख्त! क्या तुम पागल हो गये हो?" वृद्ध ने आँखें लाल करके पूछा।

"दादाजी!" युवक ने शांतिपूर्वक पुकारा।

"अरे बदमाश! मैं तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ डालूंगा!" यों कहते वृद्ध उस युवक को मारने दौड़ा।

युवक ने मुस्कुरा कर कहा–"किसी भी हालत में मनुष्य को नाराज़ नहीं होना चाहिए!"

वृद्ध अपना सर झुकाकर चुपचाप वहाँ से चला गया।
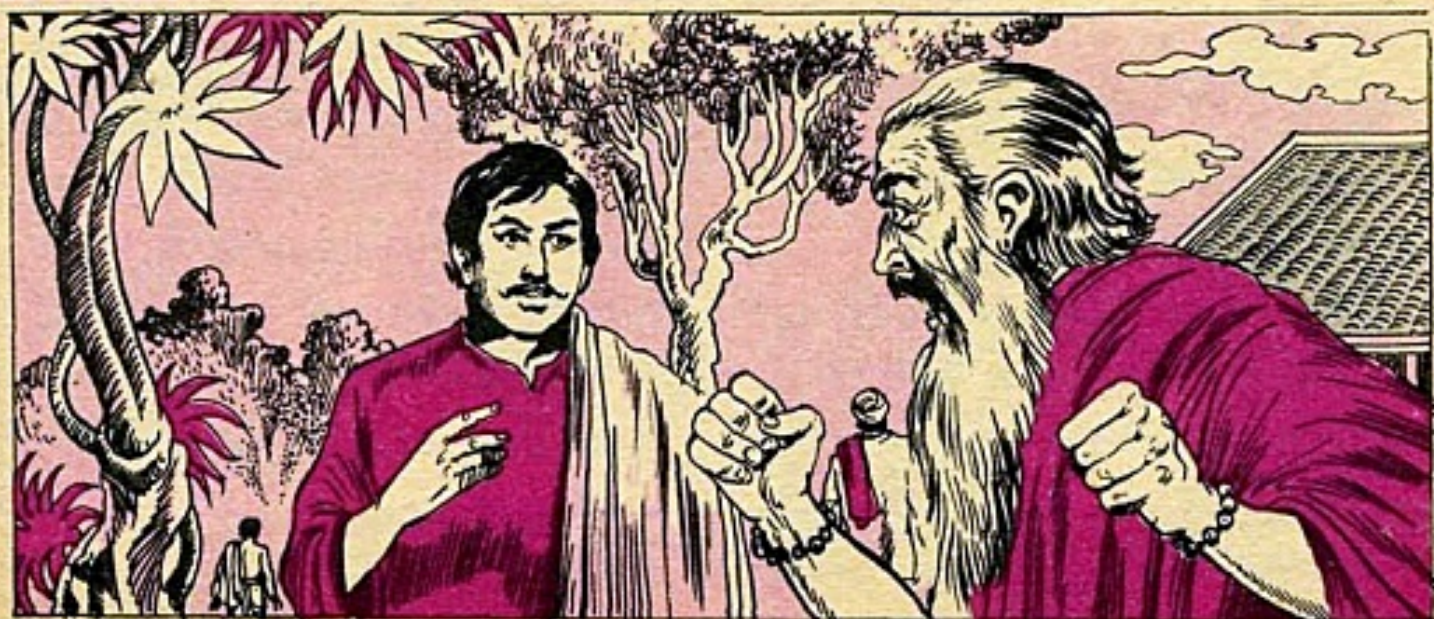
घर से मंदिर भला

नारायण के माँ-बाप ने उसे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा और उसके बड़े होने पर उसकी शादी भी की। उसकी पत्नी नारायण की हर बात को मान लेती थी। उनके तीन बच्चे हुए। तीनों बच्चे बड़े ही सुंदर और होनहार थे। लोग कहा करते थे कि नारायण बड़ा ही क़िस्मतवर है! लेकिन घर के लोग एक छोटी-सी बात को लेकर उससे नाखुश थे। वह यह थी कि नारायण मंदिर कभी आता-जाता न था।

वैसे नारायण कभी यह नहीं कहता था कि भगवान है या नहीं; लेकिन मंदिर में पूजा करने के लिए बुलाने पर वह जाता न था। कई बार माँ-बाप ने उसे समझाया–"बेटा, फ़ुरसत के वक़्त मंदिर में जाकर भगवान का ध्यान किया करो!" पर नारायण टस से मस न होता था। पत्नी ने गिड़गिड़ाकर समझाया, मगर कोई फ़ायदा न रहा। बच्चों ने भी बाप से बिनती की, लेकिन नारायण ने उनकी भी बात न मानी, किसी पर्व और त्योहार के दिन परिवार के सारे लोग मंदिर में चले जाते तो नारायण घर की रखवाली करते बैठा रहता।

एक बार नारायण का लड़का बीमार पड़ा। दवा-दारू से जब उसकी तबीयत न सुधरी, तब नारायण की पत्नी ने यह मनौती की कि अगर उसका बेटा चंगा हो जायगा तो सारे परिवार के लोग आकर भगवान की अर्चना करेंगे! उसी दिन रात को बेटे की तबीयत कुछ सुधरने लगी। बेटे के पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर नारायण की पत्नी ने अपने पति को भगवान की अर्चना कराने की अपनी मनौती की बात बताई।

नहीं; पर भगवान जानते हैं कि ऐसे जिद्दी और हठीले लोगों को अपने पास कैसे बुला लेना है ।"

इसके बाद नारायण को घर पर छोड़ घर के सारे लोग मंदिर में चले गये । इसके थोड़ी देर बाद सीतापति नामक एक सज्जन नारायण के घर पहुँचे जो दूर के रिश्ते में उनके मामा लगते थे । घर पर सिर्फ़ नारायण को देख सीतापति ने पूछा–"बेटा, सब लोग कहाँ चले गये हैं? तुम अकेले हो!"

नारायण ने बताया कि सब लोग मंदिर में गये हैं! इस पर सीतापति ने पूछा–"तुम क्यों नहीं गये, बेटा?" नारायण इसका जवाब देने जा रहा था, इस बीच सीतापति बोले–"अच्छी बात है, बेटा! जाने दो! उससे भी बढ़िया पुण्य पाने का उपाय मैं तुम्हें बता देता हूँ ।" यों कहते सीतापति फ़र्श पर बिछाई गई चटाई पर बैठ गये, थैली में से एक क़िताब निकाल कर बोले–"यह पुस्तक भगवद्गीता है! इसमें कुल अट्ठारह अध्याय हैं । मैंने सारे श्लोक कंठस्थ किये हैं । मैं बिना पुस्तक देखे सुना देता हूँ; तुम क़िताब देखते जाओ ।" लाचार होकर नारायण ने क़िताब अपने हाथ में ली । पुस्तक काफ़ी मोटी थी, तिस पर सीतापति एकएक श्लोक

नारायण ने कहा–"तुम सब लोग मंदिर में हो आओ । मैं घर की रखवाली करूँगा ।"

"आप कृपया ऐसा मत कहियेगा । भगवान नाराज़ हो जायेंगे । मैंने मनौती की है कि परिवार के सारे लोग मंदिर में जाकर भगवान की अर्चना करायेंगे ।" नारायण की पत्नी ने रोनी सूरत बनाई ।

"मुझे मंदिर और उसके परिसर से ही चिढ़ होती है । पल भर भी मैं वहाँ पर ठहर नहीं सकता ।" नारायण खीझकर बोला ।

सबके समझाने पर भी जब कोई नतीजा न निकला, तब नारायण का पिता अपनी बहू से बोला–"बेटी, चलो, वह मानेगा

लंबा कर गीत जैसे गाते हुए सुनाने लगे। यही क्रम चला तो उस सारी पुस्तक को सुनाने में कम से कम दो दिन लग जायेंगे।

थोड़ी देर बाद सीतापति ने भांप लिया कि नारायण यूँ ही पन्ने उलट रहा है, पर उसके सुनाने पर ध्यान नहीं दे रहा है! इस पर सीतापति डांटकर बोले—"बेटा, तुम श्लोक बिलकुल देख नहीं रहे हो! तुम्हारी परीक्षा लेने के ख्याल से मैंने जान-बूझकर गलत सुनाया, फिर भी तुमने गलती नहीं पकड़ी।"

"मामाजी, न मालूम क्यों आज मेरी आँखें दुख रही हैं! मैं ठीक से अक्षर देख नहीं पाता हूँ!" नारायण ने बहाना बनाते जवाब दिया।

"उफ़! तुमने पहले ही क्यों नहीं बताया बेटा? मैं आँखों की बीमारी का इलाज जानता हूँ!" यों कहते सीतापति नारायण को पिछवाड़े में ले गया, तरह-तरह के पौधों के पत्ते तोड़कर हथेली में उनका रस निचोड़ा, तब बोले—"पल भर के लिए तुम हिल-डुले बिना बैठ जाओ, मैं यह रस तुम्हारी आँखों में निचोड़ देता हूँ।"

नारायण यह सोच कर डर गया कि कहीं उस रस की वजह से वह अंधा हो जाय, फिर मना करते हुए बोला—"मामाजी, आज सुबह ही इस गाँव के

वैद्य ने मेरी आँखों में कोई रस निचोड़ दिया है। मेरा डर है कि इन दोनों के मिलने पर कोई बुरा नतीजा निकले।"

"बेटा, तुमने यह बात मुझे पहले क्यों नहीं बताई? लगता है कि तुम भुलक्कड़ हो! इस छोटी उम्र में यह आदत ठीक नहीं है, बेटा! इसके इलाज के लिए कुछ और तरह की जड़ी-बूटियाँ हैं। अभी मैं ढूंढ लेता हूँ।" यों कहते सीतापति फिर से कोई नये पत्ते तोड़ने लगे।

इसे देख नारायण का कलेजा धक्-धक् करने लगा। उसने प्रसंग बदलने के ख्याल से पूछा—"मामाजी, भगवान के प्रति आपके क्या विचार हैं?"

"भगवान जरूर हैं, बेटा! लेकिन कुछ मूर्ख यह मानते हैं कि वे सिर्फ़ मंदिरों में ही हैं; मेरा विश्वास है कि वे सर्वत्र हैं! इसीलिए मैं सब जगह भगवान की पूजा करता हूँ, लेकिन मंदिर में नहीं।" सीतापति ने जवाब दिया।

इस पर नारायण ने बड़ी जिज्ञासापूर्वक पूछा–"मामाजी, क्या आप सचमुच मंदिर में क़दम नहीं रखते?"

"भूल से भी मैं मंदिर में क़दम नहीं रखता, बेटा!" सीतापति ने जवाब दिया।

इस पर नारायण ने एक सांस में अपनी पत्नी की मनौती की बात सुनाकर कहा–"मामाजी, मेरे परिवार वाले सब मंदिर में मेरा इंतज़ार करते होंगे। हमारे लौटने तक आप घर की रखवाली करेंगे तो मैं आपके ऋण को ज़िंदगी भर चुका नहीं सकता।" यह उत्तर देकर सीतापति के जवाब की प्रतीक्षा किये बिना मंदिर की ओर दौड़ पड़ा।

नारायण जब मंदिर में पहुँचा, तब तक अर्चना शुरू नहीं हुई थी। किसी कारण से पुजारी के आने में देरी हो गई थी। इसलिए नारायण को देखते ही सब लोग आश्चर्य में आ गये।

"मैं क्या करूँ? मुझे लगा कि घर से मंदिर भला है!" इन शब्दों के साथ नारायण ने सारी कहानी सुनाई।

इसके बाद नारायण ने बड़ी भक्ति एवं श्रद्धा के साथ अपने परिवारवालों के साथ मिलकर भगवान की अर्चना में भाग लिया।

घर लौटते ही नारायण के पिता ने सीतापति से कहा–"सीतापति, तुम आज से आइंदा पर्व और त्योहार के दिनों में मेरे घर जरूर आया करो! तुम्हारी वजह से मेरा बेटा कम से कम भगवान के दर्शन तो करेगा।"

सीतापति उन बातों का रहस्य न जानने की वजह से एकदम अचरज में आ गये।
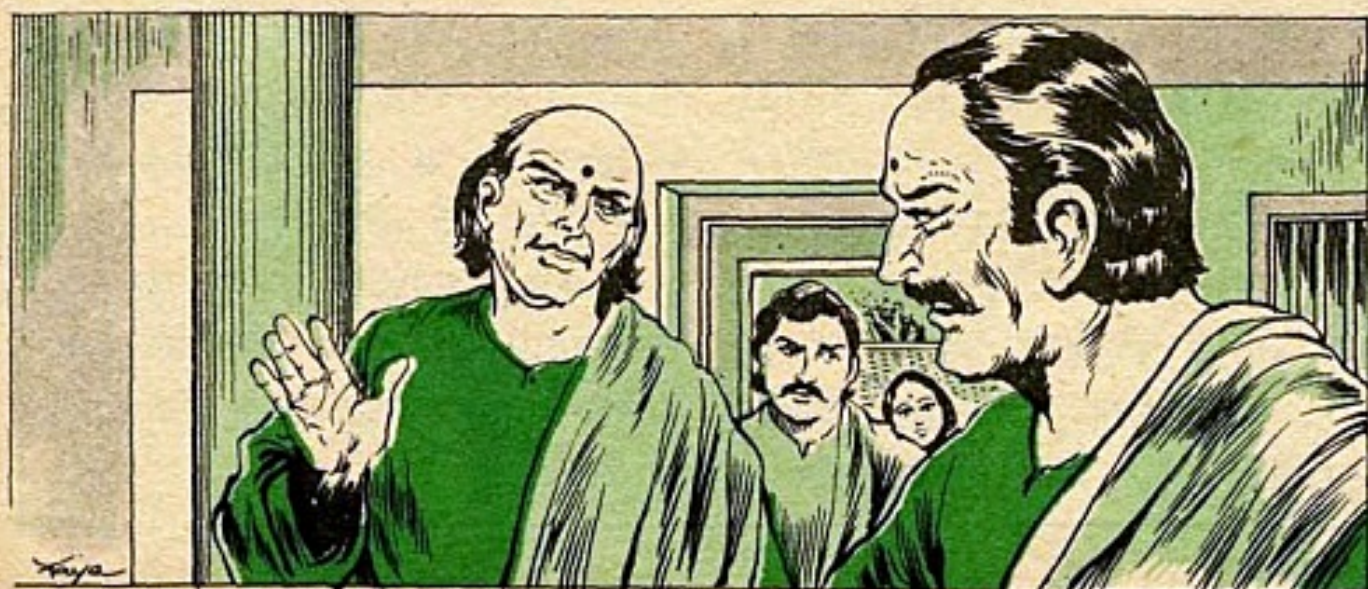
चुगलखोर

काशी राज्य पर ब्रह्मदत्त जिन दिनों में शासन करते थे, उसी समय बोधिसत्व ने मगध देश के एक गाँव में माघ नाम से एक क्षत्रिय परिवार में जन्म लिया। गाँव की समस्याओं पर चर्चा करने के लिए पचास परिवारों के पुरुष चौपाल पर जमा हो जाते थे। उस गाँव के ज्यादातर लोग भले-बुरे का ख्याल नहीं रखते थे, अक्सर चोरियाँ, डकैती और हत्याएँ करते थे, घूस देकर गाँव के अधिकारियों को खुश करके दण्ड पाने से बच जाते थे।

चौपाल की जगह बड़ी गंदी थी, वहाँ पर कूड़ा-करकट भरा होता था। इसे देख माघ ने अपने बैठने के वास्ते थोड़ी जगह साफ़ कर दी, लेकिन उस जगह पर बचे हुए लोगों में से किसी ने क़ब्जा कर लिया। इस पर माघ ने एक और जगह साफ़ कर दी, उस पर भी किसी ने अपना अड्डा जमाया।

इस प्रकार धीरे-धीरे माघ ने बड़ी सहनशीलता के साथ चौपाल की सारी जगह साफ़ कर दी। इसके बाद उस स्थान पर छाया के लिए उसने एक पंडाल बनाया, जिससे सारे गाँव वालों को बड़ा आराम पहुँचा।

थोड़े ही दिनों में माघ के इस व्यवहार ने पचास परिवारों के पुरुषों को अपनी ओर आकृष्ट किया। वे सब माघ के नेतृत्व को स्वीकार करके गाँव की सेवा में लग गये। इसके बाद सबने मिलकर सभा-समारोहों के वास्ते एक विशाल मण्डप बनाया और पीने के वास्ते ठण्डे पानी का भी इंतजाम किया।

उस समय से गाँव के लोगों ने माघ के मुँह से पँचशील सिद्धांत सीखे और अच्छा

जातक कथा

पैसे वसूल करता था, लेकिन जब से माघ गाँव के युवकों का नेता बना, और उन्हें अच्छे रास्ते पर लाया, तब से गाँव के अधिकारी की आमदनी घट गई।

इस बात को दृष्टि में रखकर अधिकारी ने राजा के पास जाकर शिकायत की– "महाराज, हमारे गाँव में अराजकता फैल गई है! माघ नामक व्यक्ति के नेतृत्व में गाँव के सारे युवक हमेशा लाठियाँ, कुल्हाड़ियाँ, भाले व बर्छे लेकर सब जगह चक्कर लगाते रहते हैं। हर रास्ते पर उन्हीं लोगों का बोल-बाला है। उन लोगों की वजह से जनता के माल और प्राण ख़तरे में पड़ गये हैं। आपको सूचित करना मेरा कर्तव्य है। इसके बाद जैसी आपकी इच्छा।"

बर्ताव करने लगे। वे प्रति दिन ऊबड़-खाबड़ सड़कों को समतल बनाते थे। रास्ते पर आने-जाने वाले रथों क़ो रोकने वाली डालों को काट देते थे। गड्ढे भर देते थे, तालाब खोदते थे, गीले प्रदेशों के बीच में से चलने के लिए ऊँची मेंड़ें बनाते थे। इस कार्य के लिए उनका पथप्रदर्शक और नेता माघ बना।

उस गाँव के एक अधिकारी था। गाँव के ज्यादातर युवक शराबी, जुआखोर, हत्यारे और भ्रष्टाचारी थे, इसलिए उस गाँव के अधिकारी को जब भी मौक़ा मिलता, लोगों से रिश्वत ऐंठ लेता, जो रिश्वत न देता, उसे जुर्माना लगाकर खूब

गाँव की हालत का पता लगा कर अगर अधिकारी की बात सही हो तो अत्याचार करने वालों को बन्दी बना कर लाने के लिए राजा ने अधिकारी के साथ कई सैनिकों को भेजा। सैनिक गाँव में पहुँच भी न पाये थे कि उन्हें गाँव के मुँहाने पर ही माघ अपने अनुचरों के साथ दिखाई दिया। उन सबके हाथों में लाठी, भाले, कुल्हाड़ी, इसी तरह का कोई न कोई हथियार था। सैनिकों ने जांच-पड़ताल तक किये बिना उन सबको बन्दी बनाया

और राजा के सामने हाज़िर किया।
राजा ने उन सब के हाथों में हथियार
देखा, मगर वे यह बात समझ न पाये

"वह मंत्र क्या है?" राजा ने पूछा।

"हम लोगों में से एक भी आदमी प्राणियों की हिंसा नहीं करता। दूसरों से ज़बर्दस्ती कोई चीज़ नहीं लेता। बुरा व्यवहार नहीं करता। झूठ नहीं बोलता। हम प्राणियों से प्यार करते हैं। सब के प्रति दया भाव रखते हैं। दान देते हैं, सड़कें बनाते हैं, तालाब खोदते हैं, सरायें बनाते हैं। यही हम लोगों का मंत्र है।, यही हमारी शक्ति है!" माघ ने जवाब दिया।

यह जवाब पाकर राजा अचरज में आ गया। उसने पूछा–"हमने सुना है कि तुम लोग राहगीरों को लूटते हो! अपने हथियार दिखा कर जनता को डरा करके धन लूटते हो। क्या यह बात सच नहीं है?"

"महाराज, आपने किसी की शिकायत सुनकर उस पर यक़ीन किया है, मगर इसकी सचाई की जांच-पड़ताल नहीं कराई है।" माघ ने कहा।

"तुम लोग हथियारों के साथ पकड़े गये। इसलिए हमने जांच कराने की जरूरत न समझी।" राजा ने कहा।

"महाराज, उन हथियारों का उपयोग हम जनता के फ़ायदे के लिए करते हैं। कुलहाड़ियों से रास्ते में फैली डालों को काट देते हैं। तालाब खोदने, सड़कें बनाने और सरायों का निर्माण करने के लिए आवश्यक साधन हमेशा हमारे साथ रखते हैं!" माघ ने अपनी कैफ़ियत दी।

राजा ने उन लोगों के बारे में जाँच-पड़ताल करवाई और असली बात जान ली। यह साबित हुआ कि गाँव के अधिकारी का दोषारोप झूठा है। कई सालों से उस अधिकारी ने रिश्वत लेकर जो धन कमाया था, सारा का सारा उन युवकों के हाथों में सौंप कर राजा ने उन्हें समझाया–"आज से तुम्हीं लोग अपने गाँव का शासन करो। मैं दूसरे अधिकारी को नियुक्त नहीं करूंगा।"

साथ ही राजा ने पट्ट हाथी को भी उन्हें उपहार में दे दिया।

गुलाम की क़िस्मत

ई. सन १२१०-१२३६ के मध्य काल में दिल्ली पर सुलतान इल्तमश शासन करते थे। एक बार एक सौदागर ने सुलतान के पास एक सौ गुलामों को लाकर दिखाया। सुलतान ने निन्यानबे गुलामों को खरीद कर उलुग खाँ को खरीदने से इनकार किया!

कमजोर गुलाम ने सुलतान के पैरों पर गिरकर पूछा–"हुजूर, आपने इन सब लोगों को किसके वास्ते खरीदा?" सुलतान ने जवाब दिया–"मेरे वास्ते!" इस पर उलुग खाँ ने पूछा–"तब तो आप मुझे खुदा के वास्ते खरीद लीजिए।" सुलतान ने हंसकर उसको भी ख़रीद लिया।

एक बार सुलतान से मिलने एक मशहूर ज्योतिषी आया। उसने सुलतान की हस्त रेखाएं देख बताया कि इल्तमश के बाद उसकी गद्दी पर एक गुलाम बैठेगा। इस पर इल्तमश थोड़ा भी विचलित नहीं हुआ, बोला–"कोई बात नहीं, मेरे बेटों में से एक भी इन गुलामों से ज्यादा बुद्धिमान नहीं है। मैं भी एक जमाने में गुलाम ही था।"

वैसे सुलतान ने उस ज्योतिषी पर ज्यादा विश्वास नहीं किया, मगर उसकी बीबियों के दिल में ज्योतिष के प्रति गहरा विश्वास जम गया। उन में से हर कोई अपने बेटे को सुलतान बनाने पर तुली हुई थी। इसलिए सबने सोचा कि सुलतान बननेवाले गुलाम का पता लगवा कर पहले ही उसकी हत्या कराई जाय।

इल्तमश की बीबियों ने सुलतान पर ज़ोर-दबाव डालकर एक बार और ज्योतिषी को बुलवा भेजा। सुसतान ने अपने सभी गुलामों को क़तार में आकर ज्योतिषी को अपनी हाथ की रेखाएँ दिखाने का आदेश दिया। गुलामों की संख्या काफ़ी बड़ी थी। उन सब की हस्त रेखाओं की सावधानी से जाँच करने में ज्योतिषी को काफ़ी वक़्त लगा।

सभी गुलामों के साथ क़तार में खड़े उलुग खाँ को प्यास लगी। वह सब की आँख बचाकर वहाँ से चुपके से निकल गया। मगर जब वह अपनी प्यास बुझाकर लौटा, तब तक सुलतान और ज्योतिषी अपना काम पूरा करके लौट गये थे। बाक़ी गुलामों ने यह कहकर उलुग खाँ का मजाक़ उड़ाया कि वही सुलतान बनेगा।

कुछ साल बीत गये। उलुग खाँ अपने कर्तव्य के पालन में जागरूक रहा और धीरे-धीरे वह सुलतान इल्तमश का विश्वास पात्र बना। सुलतान ने उलुग खाँ को एक सरदार का पद दे दिया। इस तरह दरबार के चालीस सरदारों में उलुग खाँ एक प्रमुख सरदार बना।
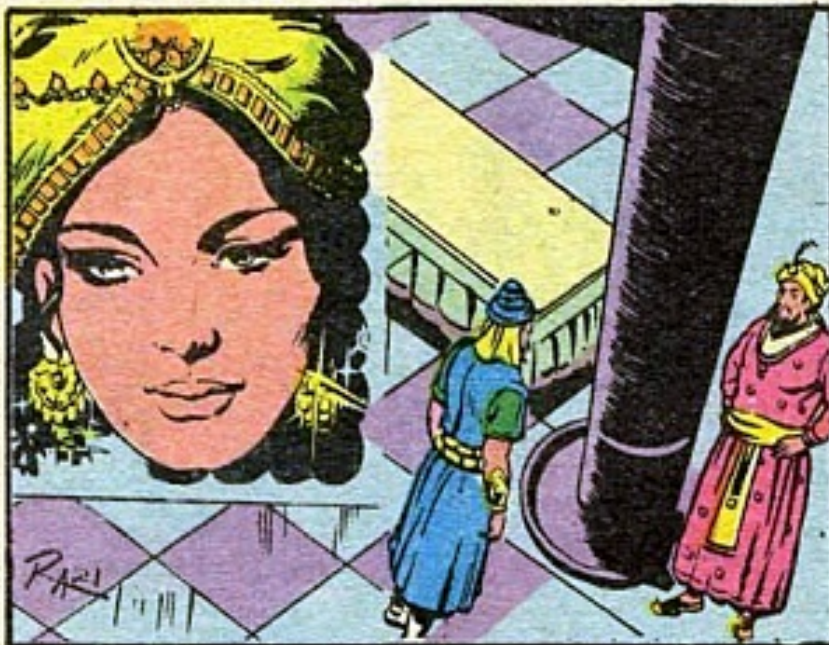
इल्तमश ने अपनी मौत के समय अपनी बेटी रजिया को दिल्ली की सुलताना नियुक्त किया। मगर थोड़े ही दिनो में वह खून का शिकार हो गई। इस पर रज़िया के भाई नाजिरुद्दीन ने गद्दी पर अधिकार कर लिया। पर वह नालायक निकला। इस पर उसे उलुग खाँ ने अपना दामाद बनाया और सुलतान के संरक्षक के रूप में शासन सूत्र को अपने हाथ में लिया।

इसके बाद नाजिरुद्दीन की किसी कारण से आकस्मिक मृत्यु हो गई। उसके कोई संतान न थी। इस पर उसके ससुर उलुग खाँ गयाजुद्दीन बाल्बन के नाम से दिल्ली का सुलतान बन बैठा। इस तरह ज्योतिषी की वाणी सच निकली।

बाल्बन एक समर्थ शासक था। जनता उसका बड़ा आदर करती थी। सुलतान ने क्रूर और भयंकर बटमारों का जंगलों में पीछा करके उन्हें बेरहमी के साथ खतम कर डाला। बंगाल के सूबेदार तुगरिल खाँ ने विद्रोह किया, इस पर सुलनान ने खुद उस पर हमला किया और उसे मार डाला।

बाल्बन का बड़ा बेटा मुहम्मद खाँ सुलतान का सूबेदार था और वह राज्य की सरहद की रक्षा किया करता था। ई. सन १२७९ में प्रलय भयंकर के नाम से मशहूर मँगोल जाति का नेता चिंघिज खाँ ने जब हमला किया, तब मुहम्मद ने उसे हराया। १२८५ में चिंघिज खाँ ने एक बार और हमला किया। उस लड़ाई में मुहम्मद की मौत हो गई।

अपने बड़े बेटे की मौत पर बाल्बन को अपार दुख हुआ। उसी चिंता में घुलकर वह अपनी अस्सी साल की उम्र में १२८७ में मर गया। इसके बाद दिल्ली की गद्दी के वास्ते उसके पोते कैखुसरो और कैकोबाद ने झगड़ा किया; पर दुश्मन ने उन दोनों की हत्या की। इस प्रकार गुलाम वंश के सुलतानों का शासन खतम हो गया।

स्वार्थ के सब सगे हैं

सुजाता का ससुर जानकीराम स्वभाव से बड़ा ही उदार था। गाँव का कोई आदमी उसके पास मदद मांगने आ जाता तो यथा शक्ति रुपये देकर भेज देता।

अपने ससुर का यह व्यवहार सुजाता को खटकता था। उसने अपने पति सुधाकर से कहा–"अजी, सुनिये तो! आपके पिताजी हर किसी को रुपये उधार देते हैं; अगर यही हालत रही तो थोड़े दिनों में हमारा दिवाला पिट जाएगा!"

"मेरे पिताजी बीस-पच्चीस रुपये उन्हीं को देते हैं जो सचमुच ही मुसीबत में होते हैं! आखिर मनुष्य के अन्दर इतनी दया तो होनी चाहिए न?" सुधाकर ने समझाया।

"दया के नाम पर परिवार को तबाह करना मैं पसंद नहीं करती। आप अपने पिताजी को समझाइये, अगर वे चाहें तो हमारा हिस्सा देकर अपने हिस्से का धन खैरात बांटे!" सुजाता बोली।

सुधाकर ने अपनी पत्नी को समझाने की कोशिश की, मगर सुजाता अपनी बात पर डटी रही और अपने पति के साथ झगड़ा-फ़साद करती ही रही।

जानकीराम ने भांप लिया कि किसी बात को लेकर बेटे और बहू के बीच मन-मुटाव बढ़ता जा रहा है, एक दिन उस ने सुधाकर से पूछा कि झगड़े का कारण क्या है? सुधाकर ने सारा किस्सा सुनाया।

जानकीराम नाराज़ नहीं हुआ, उसने अपनी दस एकड़ जमीन में से आधा अपने बेटे के नाम कर दिया और वह अपनी पत्नी के साथ अलग रहने लगा। एक महीने के बाद सुधाकर का एक दोस्त मदन मोहन उसके घर आया और बोला– "दोस्त, जानते हो कि तुम्हारे पिता

विनोद कुमार

रिश्तेदार का विचार करेंगे, तो हमारा सर्वनाश हो जाएगा।"

"इस उम्र में मेरे पिताजी की आँखें खुलवाने का श्रेय तुम्हीं को प्राप्त है! यह सब तुम्हारी करामात है!" सुधाकर ने मजाक़ उड़ाया। इसके बाद मदन मोहन क़र्ज मांगे बगैर चला गया।

दूसरे दिन सुजाता का पिता विश्वनाथ अपनी बेटी को देखने आया, बातों के सिलसिले में बोला—"बेटी, हमारे संकल्प के मुताबिक़ तुम्हारी बहन की शादी के होने की संभावना नहीं है। दहेज की रक़म में से दो हज़ार कम पड़ रहे हैं! बहुत कोशिश की, क़र्ज नहीं मिल रहा है!"

सुजाता अपने पिता को हिम्मत बंधाते हुए बोली—"आपके दामाद से दो हजार रुपये लेकर मैं कल शाम तक घर पहुँच जाऊँगी। बहन को भी एक बार देखने की मेरी बड़ी इच्छा हो रही है!"

उस दिन रात को सुजाता ने सारा किस्सा अपने पति को सुनाकर दो हज़ार रुपये मांगा। इस पर गुस्से में आकर सुधाकर बोला—"इतनी जल्दी तुम्हारी बुद्धि बदल गई है? तुम्हीं ने तो मुझे सिखाया था कि रुपये-पैसे के मामले में दोस्ती और रिश्तेदारी का ख़्याल रखना नहीं चाहिए! तुम्हारी इस बात को मान

तुम्हारी वजह से कैसे बदल गये हैं! मुझे बड़ी जरूरत आ पड़ी थी, मैंने उनसे दस रुपये कर्ज़ मांगा। उन्होंने साफ़ कह दिया कि उनके पास दस क्या, एक भी रुपया नहीं है! साथ ही आँखों में आँसू भर कर कहा कि उनके भीतर जो कुछ दया थी, वह उसके बेटे की वजह से जाती रही।"

यह ख़बर सुनकर सुधाकर बड़ा दुखी हुआ। उसी वक़्त सुजाता उसे अलग बुला ले जाकर बोली—"आपके पिता की इतने दिन बाद आँखें खुल गई हैं! आपके दोस्त आप से रुपये मांग बैठेंगे, उनसे साफ़ कह दीजिए कि आपके पास एक कौड़ी भी नहीं है! ऐसे मामलों में अगर हम दोस्त-

कर ही मैं अपने पिता से दूर हो गया? तुम्हारे पिता की मदद करने के लिए दो हज़ार क्या, दो रुपये भी मैं नहीं दूंगा ।"

सुजाता ने समझ लिया कि उसका पति अपना हठ नहीं छोड़ेगा, इस पर दूसरे ही दिन अपने मायके जाकर उसने अपने पिता को सच्ची बात बता दी । विश्वनाथ ने गहरी सांस लेकर कहा—"आखिर तुम्हारे पति भी अपने बाप का बेटा है न!"

अपने पिता की बातों का मर्म न समझ पाने की हालत में सुजाता ने अचरज में आकर अपने पिता की आँखों में देखा ।

इस पर विश्वनाथ बोला—"तुम यह सोचकर नाराज़ मत हो जाओ कि मैंने तुम्हारे पति को कुछ बुरा-भला कह दिया है! तुम्हारे ससुर अलगोझा के पहले कैसे उदार थे! उन दिनों में मैंने उनसे तुम्हारी बहन की बात सुनाकर कहा था कि शादी के वक़्त कुछ रुपयों की जरूरत पड़ेगी । इस पर उन्होंने कहा था—"यह कौन बड़ी बात है? क्या आपको चार-पांच हज़ार रुपये की जरूरत पड़ेगी? बस, यही बात है न! जब चाहे, तब आप ले जाइये! लेकिन अब...." ये शब्द कहते विश्वनाथ चुप रह गया । सुजाता ने आशा भरी दृष्टि दौड़ाकर कहा—"पिताजी, ससुरजी से मांग लेते तो काम बन जाएगा न?"

"बेटी, मैं यही बात बताने जा रहा हूँ! एक महीने पहले जब मैं तुम्हारे गाँव में आया था, तब मैंने रुपये का जिक्र किया

था। उन्होंने खीझकर यही जवाब दिया था कि रुपये-पैसे की बात उनके सामने न उठावें! ऐसे दयालू तुम्हारे ससुर न मालूम कैसे बदल गये हैं? मूर्खतापूर्ण सलाहें देकर तुम्हारे पति ने उनके दिल को पत्थर बनाया है!" विश्वनाथ ने कहा।

इस पर सुजाता पश्चात्ताप प्रकट करते बोली—"पिताजी, मैंने जो बेवकूफ़ी की, उसे खोल देने पर कम से कम मेरा दिल हल्का हो जाएगा! उन दिनों में ससुर की दया की भावना और परोपकार की वृत्ति मुझे ऐसे लगी, मानो वे दुनियादारी का अनुभव नहीं रखते हैं, मैंने ही आपके दामाद से लड़-झगड़ कर अपना परिवार अलग बसाया। मैं नहीं जानती थी कि उसकी वजह से हमारा ऐसा बड़ा भारी नुक़सान होने वाला है।"

यह जवाब सुनकर विश्वनाथ गरज कर बोला—"बुजुर्गों ने यूँ ही नहीं बताया कि मनुष्य अपने स्वार्थ के समय ही सत्य को समझ पाता है! तुमने कैसे सोचा था कि एक ही व्यक्ति कुछ लोगों के प्रति उदारतापूर्ण व्यवहार करे और दूसरों के साथ कठोर बने? दर असल दुनियादारी का अनुभव तुम नहीं रखती हो! इस बात की जाँच करने के लिए मैंने और तुम्हारे ससुर ने मिलकर मदन मोहन को तुम्हारे पति के पास भेजा था। मदन मोहन की बातें सुनकर तुम बड़ी खुश हो गई थीं न? मगर जब तुम्हें यह मालूम हुआ कि कर्ज न मिलने की वजह से तुम्हारी बहन की शादी नहीं हो पा रही है, तब तुम दुखी हो रही हो! तुम्हारे ससुर ने मुझे कभी के ये रुपये दे दिये हैं। तुम आइंदा मूर्खतापूर्ण सलाहें देना बन्द करो।"

सुजाता आँखों में आँसू भरते बोली—"पिताजी, मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई है। घर लौटते ही मैं सास-ससुर के पैरों पर गिरकर माफ़ी मांग लूंगी और सब मिलकर एक साथ रहने के लिए उन्हें मना लूंगी।"

"बेटी, यही बुद्धिमानी का काम है!" विश्वनाथ ने खुश होकर कहा।
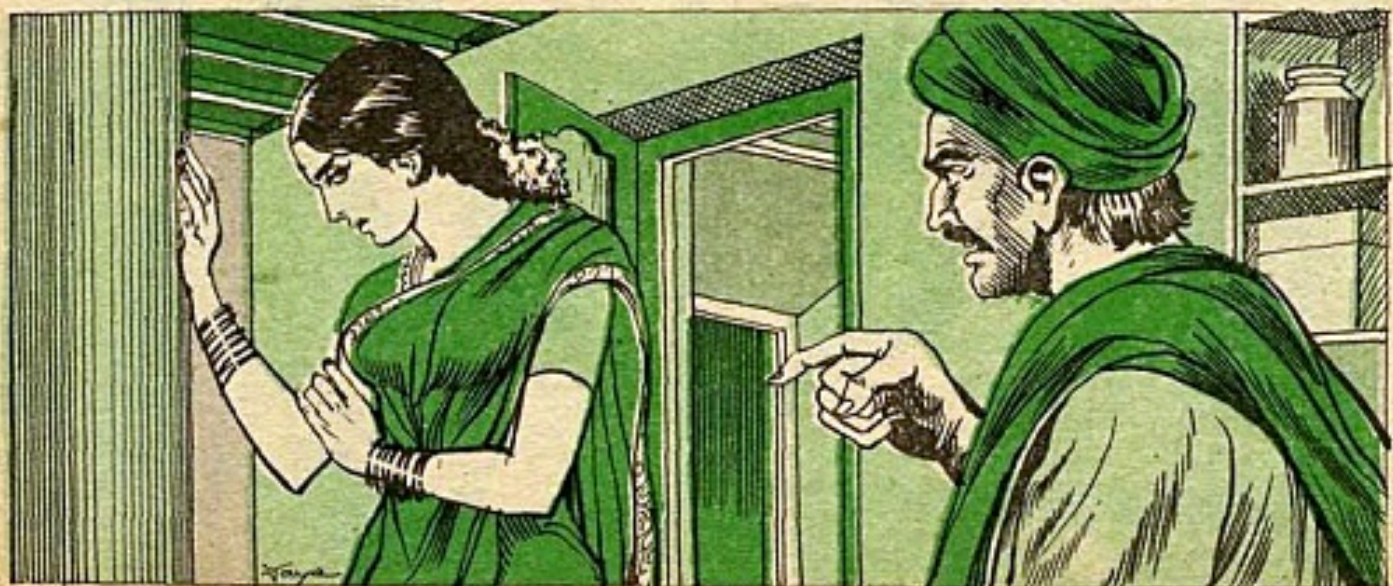
विद्या का महत्व

विजयपुरी में एक जौहरी था। उसके चित्रगुप्त नामक एक पुत्र था। चित्रगुप्त जब जवान हो गया, तब जौहरी ने उसका विवाह करने का निश्चय किया। जौहरी ने नगर के अन्य प्रसिद्ध व्यापारियों के परिवारों की सुंदर कन्याओं के विवरण मंगवाये और उनमें से अप्सराओं जैसी तीन सुंदर कन्याओं का चुनाव किया।

चित्रगुप्त ने अपने पिता के साथ जाकर तीनों कन्याओं को देखा। तीनों अत्यंत सुंदर थीं। मगर चित्रगुप्त की दृष्टि उनमें से एक कन्या की छोटी बहन भानुमती पर पड़ी। भानुमती वैसे अपनी दीदी के जैसे सुंदर न थी, लेकिन वीणा बजाने में वह अपार प्रतिभा रखती थी। कविता पर जान देती और चिकित्सा करना भी जानती थी।

चित्रगुप्त ने भानुमती के साथ शादी करने की इच्छा प्रकट की, इस पर जौहरी ने आश्चर्य में आकर अपने बेटे से पूछा–"बेटा, भानुमती तो ज्यादा सुंदर नहीं है न ?"

चित्रगुप्त पल भर के लिए संकोच में पड़ गया। फिर बोला–"पिताजी, आप कृपया बुरा न समझें। सुंदरता तो जन्म के साथ ही प्राप्त होती है! उसके लिए बुद्धिमत्ता और विशेष साधना की ज़रूरत नहीं है! पर भानुमती ने स्वयं साधना करके वीणा बजाने के साथ इलाज करना भी सीख लिया और इन दोनों विद्याओं में प्रवीण बन गई। उम्र के बढ़ने के साथ सौंदर्य भी घट जाता है, लेकिन विद्याओं में कुशलता बढ़ती जाती है।"

बेटे के अंतर को समझ कर जौहरी ने भानुमती के साथ चित्रगुप्त का विवाह संपन्न किया।

अटारी की सीढ़ी

रविराम इस बात पर बड़ा खुश था कि उसके निजी गाँव में ही शादी का रिश्ता क़ायम हुआ और फ़िज़ूल खर्च के बिना उसकी शादी हो गई। उसके सह कर्मचारी का ससुराल उसके गाँव से काफी दूर पड़ता था। इस वास्ते पर्व-त्योहार तथा मांगलिक कार्यों के लिए उसे ससुराल हो आने में काफ़ी रुपये खर्च करने पड़ते थे। इस वज़ह से वह हमेशा ऐसा दिखाई देता, मानों कर्ज़ के बोझ से दबा हो।

रविराम की पत्नी का नाम अनुपमा है। रविराम ने एक छोटा-सा घर किराये पर लिया और जब कभी उसे ससुराल जाने की जरूरत पड़ती, वह पचास पैसे खर्च करके किराये की गाड़ी में हो आता था।

एक दिन पड़ोसी प्रभाकर से रास्ते में रविराम की मुलाक़ात हुई। प्रभाकर ने रविराम से पूछा–"मैं आपका पड़ोसी हूँ। वैसे मुझे घर पर ही आप से रुपये मांगना था। एक जरूरी काम आ पड़ा है। मुझे सौ रुपये उधार दे दीजिए!"

"भाई साहब, आप जानते ही हैं! मैंने अभी अभी घर बसाया है, मेरे खर्च भी ज्यादा होते हैं। मैं इतनी रक़म का इंतज़ाम कैसे कर सकता हूँ?"

रविराम से प्रभाकर का कर्ज मांगना उसे आश्चर्यजनक लगा। उससे कहीं ज़्यादा प्रभाकर को तनख़्वाह मिलती है। तिस पर उसका मकान निजी है। उसके कोई संतान भी नहीं है। ऐसी हालत में उसे क़र्ज़ लेने की ज़रूरत क्यों आ पड़ी है?

रविराम ने प्रभाकर के सामने यही शंका प्रकट की, इस पर प्रभाकर गहरा निश्वास लेते हुए बोला–"भाई साहब, कोई अक़लमंद आदमी अपने ही गाँव की लड़की के साथ शादी न करेगा, मेरी

गीता वात्स्यायन

पत्नी नामक-दाल से लेकर रुपये-पैसे भी अपने मायके पहुँचा देती है। हाँ, सुनिये, आपका ससुराल भी इसी शहर में है न? थोड़ा सावधान रहिए!"

यह जवाब सुनने पर रविराम को लगा, मानो उसके सर पर गाज गिर गई हो। आज तक वह यही सोचता आ रहा है कि उसने नई गृहस्थी बसाई है, इसलिए खर्च बढ़ता जा रहा है! उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि अनुपमा न मालूम क्या-क्या चीज़ें अपने मायके भिजवा रही है।

ये ही सारी बातें सोचते रविराम घर पहुँचा, तो देखता क्या है, अनुपमा नारियल की चटनी बना रही है! थोड़ी देर बाद किसी काम से अनुपमा पिछवाड़े में चली गई। मौक़ा देख रविराम ने चटनी वाले बर्तन का ढक्कन खोलकर देखा, उसमें एक नारियल के बराबर चटनी न थी,। दूसरे दिन उसने एक जमीं कंद लाकर दिया, पर सब्जी पूरे कंद के बराबर न थी, फिर क्या था, रविराम के दिल में अपनी पत्नी के प्रति शंका और बढ़ गई। साथ ही उसने देखा कि उसका साला दिन में दो-तीन बार अनुपमा से मिलने आता-जाता है। इसका मतलब है, अनुपमा अपने छोटे भाई के हाथ ये सारी चीज़ें अपने मायके पहुँचा रही है। इस शंका के

पैदा होते ही रविराम ने निश्चय कर लिया कि उसकी गैरहाज़िरी में अनुपमा जो-जो चीज़ें अपने मायके भेजतीं है, इसका पता लगाकर उसे खूब खरी खोटी सुनानी है।

एक दिन शाम को रविराम ने अनुपमा से बताया कि वह पड़ोसी गाँव में जा रहा है, अनुपमा अपने लिए रसोई बनाने रसोई घर के भीतर चली गई।

"सुनो, में जा रहा हूँ, तुम किवाड़ अच्छी तरह से बंद कर लो।" यों चेतावनी देकर रविराम बीचवाले कमरे की अटारी पर जा बैठा, जहाँ पर आचार वाली झारी रखी गई थी। अनुपमा ने ने सोचा कि उसका पति बाहर चला गया

है, उसने भीतर से अलगनी चढ़ा दी, रसोई में काम देखने चल पड़ी। उस जल्दबाजी में अटारी पर लगाई गई सीढ़ी से उसका पैर ठोकर लग गया, वह गिरने को हुई, फ़िर संभल कर सीढ़ी को गाली देते उसे हटा दिया और नीचे लगा दी।

थोड़ी देर बाद दर्वाजे पर दस्तक देने की आवाज़ सुनाई दी, रविराम ने सोचा कि उसका साला कोई चीज़ ले जाने आ धमका है। इस बीच अनुपमा किवाड़ खोलकर बोली—"तुम किराये की गाड़ी लेते आओ!" यों आवाज़ देकर पुनः रसोई में लौट आई, चूल्हे पर से चावल का बर्तन उतार दिया, संदूक से रुपये निकाले, कमर में खोंसकर दर्वाजा बंद किया, तब ताला लगाकर चली गई।

"उफ़! मेरी शंका सच निकली! अपने छोटे भाई के आते ही रुपये लेकर मायके चली गई है!" यों सोचते अटारी पर बैठे रविराम ने दांत भींच लिये।

थोड़ी देर बाद चींटों ने एक साथ रविराम पर धावा बोल दिया। जब उससे चींटों की यह पीड़ा सही नहीं गई, तब उसने अटारी पर से नीचे कूदने का निश्चय कर लिया। पर अटारी काफ़ी ऊँची थी। नीचे कूदने पर हाथ-पैर टूट सकते हैं!

वह सोच ही रहा था कि अब क्या किया जाय, इस बीच दर्वाजा खोलने की आहट सुनाई दी। उसे लगा कि उसकी जान में जान आ गई है। मगर भीतर घुसने वाला कोई चोर था। वह नकली चाभी से ताला खोलकर अंदर घुस आया था। उसने भीतर घुसते ही दिया जलाया और रुपये-गहनों की खोज करने लगा।

उधर रविराम अटारी पर उकड़ूं बैठा था जिससे उसकी गर्दन दुख रहा था, उल्टे चींटों के काटने से वह परेशान था। उस हालत में चोर ही उसे प्राणरक्षक प्रतीत हुआ। उसने हिम्मत करके पूछा—"भाई साहब, सुनो तो, दीवार से सटी उस

सीढ़ी को अटारी पर लगा दो। यहाँ पर मेरी जान चली जा रही है।"

चोर चौंक पड़ा, मगर उसने सोचा कि अटारी पर बैठा हुआ आदमी कोई चोर ही होगा, फिर अटारी की ओर नज़र दौड़ा कर बोला–"अरे बच्चू, तुम जैसे नौसे चोर इस पेशे में आकर हम जैसे लोगों की जान आफ़त में डाल रहे हैं। तुम्हें अपना सर छिपाने को अटारी को छोड़ कुछ दिखाई न दिया? चलो, उतर आ जाओ।" यों डांटते चोर ने अटारी से सीढ़ी लगा दी।

रविराम यह सोचते नीचे उतर आया, 'जान बची, लाखों पाये।' चोर उसके समीप जाकर समझाने के स्वर में बोला–"तुम चोरी के माल में हिस्सा मांगोगे तो तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ डालूंगा। मैंने तुमको अटारी पर से उतार दिया, इसके बदले में तुम इस घर में हाथ लगनेवाली सारी चीज़ों को बांधने में मेरी मदद करो।"

सारा घर छान डाला गया, पर चोर के हाथ कुछ न लगा। वह गुस्से में आकर बोला–"न मालूम आज सवेरे मैंने किसका चेहरा देखा है, इस दरिद्र के घर आ गया हूँ।"

ये शब्द सुनते ही रविराम का दिल कचोट उठा। वह इस बात पर बड़ा खुश हुआ कि उसकी पत्नी पहले ही संदूक में से रुपये और गहने ले गई है।

चोर यह सोचते सारा घर ढूंढने लगा कि इन दरिद्रों के घर में भले ही कोई
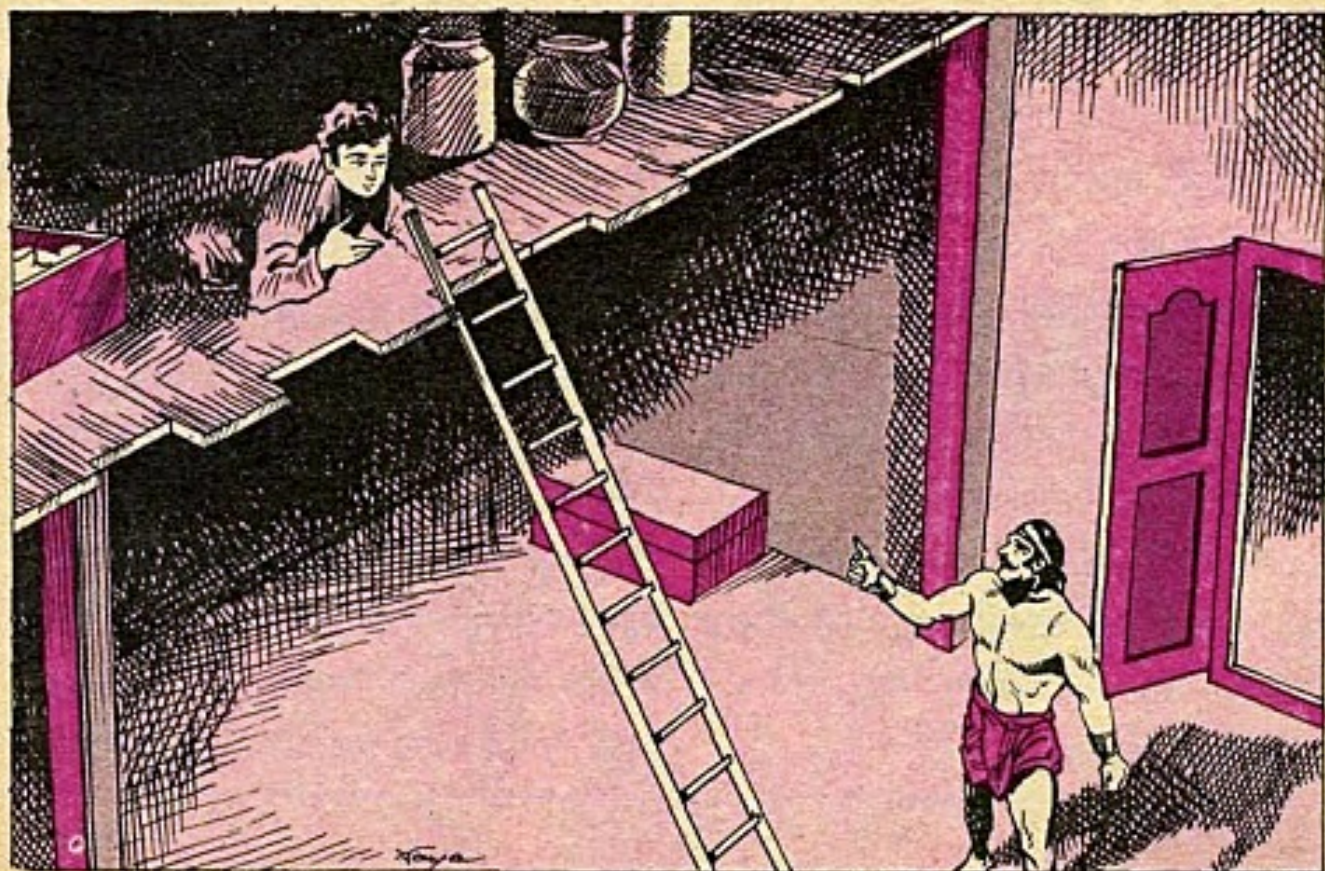
क़ीमती चीज़ हाथ न लगे, कम से कम खाने को तो कुछ मिले!" सारा घर ढूंढने पर रसोई घर में उसे चावल को छोड़ कुछ दिखाई नहीं दिया।

"बिना दाल व सब्जी के खाना कैसे खाते हैं ये लोग!" यों कहते चोर खीझ कर फिर गुन-गुनाने लगा—"इस घर में सिवाय ताला के काम आनेवाली कोई चीज़ नहीं है। चलते वक़्त वही लेते जाऊँगा।"

"अच्छी बात है। मगर सुनो, अटारी पर अचार की झारियाँ हैं, एक उतार लाओ, मजे में खाना खा लेंगे।" रविराम ने सुझाया।

इस पर चार सीढ़ी से होकर अटारी पर पहुँचा, रविराम ने सीढ़ी को अलग हटाया और बोला—"अबे, मैं कोई चोर-लुटेरा नहीं हूँ। बल्कि इस मकान का मालिक हूँ! जल्द ही मैं तुमको जेल भिजवाता हूँ!"

इतने में दर्वाजे पर दस्तक देने की आवाज़ हुई, रविराम ने जाकर किवाड़ खोल दिये। अनुपमा हांफते अन्दर प्रवेश करते हुए बोली—"आप क्या गाँव नहीं गये? आपने ताला कैसे खोल दिया? जानते हैं, आज कैसा खतरा हो गया है?"

रविराम की समझ में कुछ न आया। अनुपमा बोली—"आपके जाने के थोड़ी देर बाद किसी ने आकर मुझे बताया कि आप जिस गाड़ी में सफ़र कर रहे थे, वह उलट गई है और आपको बड़ी चोट लग गई है। इस पर मैं घबराकर रुपये-पैसे हाथ में ले किराये की गाड़ी में यह खबर लानेवाले के साथ चल पड़ी वह गाड़ीवाला और यह चोर दोनों चोर-चोर मौसेरे भाई हैं! रास्ते में मुझे छुरी दिखाकर मेरे सारे रुपये छीन लिये। अच्छा हुआ कि परसों हमारे मायके के सारे लोग एक शादी में गये। जाते वक़्त मेरी छोटी बहन मेरे सारे गहने पहनकर ले गई, वरना वे भी इन कमबख्तों के हाथ लग जाते! रुपये गये, कोई बात नहीं, आप सकुशल घर लौट आये। यही

मेरे लिए बड़ी खुशी की बात है।"

तब जाकर रविराम को यह बात याद आ गई कि दो दिन पहले उसके ससुराल वाले सब घर पर ताला लगाकर पड़ोसी गांव में गये हैं। उसके प्रति ऐसा प्यार रखने वाली पत्नी के प्रति रविराम के दिल में सहानुभूति पैदा हुई। उसने अपना सारा कपट नाटक खोल दिया।

इस पर अनुपमा मुस्कुराते हुए बोली– "मैं चटनी तैयार करते उसके स्वाद की जाँच करने के बहाने आधी चटनी चाट जाती हूं, वैसे ही सब्जी छौंकते वक़्त आधी गरम-गरम सब्जी खा जाती हूँ। मेरी माँ समझाया करती थी कि ससुराल में भी तुम ऐसा ही करोगी तो अच्छा न होगा।"

ये सारी बातें अटारी पर बैठा चोर सुन रहा था। उससे रहा नहीं गया, बोला– "बहन, ऐसी छोटी-मोटी बुरी आदतों को मन पर नियंत्रण करके छुड़वाना कहीं उत्तम है। इसी तरह औरतों के प्रति मर्दों के मन में कोई संदेह पैदा हो जाता है तो सीधे सवाल करके जान लेना बेहतर होता है! मगर इस तरह से स्वांग रचने वाले नाटक खतरों से खाली नहीं होते। सीढ़ी अगर अटारी से सटी होती है तो कोई भी उस पर चढ़ सकता है, इसी प्रकार पति-पत्नी एक दूसरे को समझ कर हिल-मिलकर रहे तो उनके बच्चे सुखी रह सकते हैं।"

अनुपमा अटारी पर चोर को देख चीख़ उठी, रविराम को चोर की बातों की सचाई का बोध हुआ। उसने अपनी पत्नी को समझाया–"यह तो बड़ा ही अक़्लमंद और दुनियादारी का अनुभव रखनेवाला चोर है, इसलिए तुम डरो मत!"

इसके बाद रविराम ने अटारी से सटाकर सीढ़ी लगाई और बोला–"भाई साहब, तुमने मेरी आँखें खोल दीं, भले ही तुम चोर क्यों न हो, मेरे मेहमान हो। इसलिए मजे से खाना खाकर तब जाओ! अचार की एक झारी अटारी पर से उठा लाओ! अब उतर आओ!"

सन्यासी का सौदा

एक पहाड़ पर सन्यासियों का एक मठ था। उस प्रदेश में पहली बार एक युवक आम बेचने निकला। उसने सोचा कि शायद सन्यासी आम खरीद लें, इस ख्याल से बड़ी मुसीबतें उठाकर पहाड़ पर चढ़ गया और एक युवा सन्यासी के पास जाकर पूछा—"साधू महाराज, साल में एक ही बार फलने वाले आम लाया हूँ। क्या आप ख़रीद लेंगे?"

युवा सन्यासी दयालू था, लेकिन भोला था। फल बेचने वाले युवक की ओर सहानुभूति के साथ अपनी नज़र दौड़ाकर बोला—"आज के लिए नहीं चाहिए!"

युवक हताश हो पहाड़ से उतर पड़ा। उस वक्त युवा सन्यासी ने ऊपर से युवक को पुकारा—"सुनो भाई, तुम जरा ऊपर आ जाओ।"

फल बेचने वाले ने सोचा कि सन्यासियों ने आम ख़रीदने का निश्चय कर लिया। वह हांफते-हांफते फिर पहाड़ पर चढ़ गया।

युवा सन्यासी ने उसकी ओर पहले से कहीं ज्यादा सहानुभूति और दया का भाव दिखाते हुए कहा—"आज के लिए ही नहीं, कल के लिए भी हमें आम नहीं चाहिए। मैं यह सोचकर पहले ही बता देता हूँ, वरना कल तुम नाहक़ मुसीबत उठाकर पहाड़ पर चले आओगे!"

गुफा के द्वार पर ढके पहाड़ जैसी शिला को गजराज ने अपनी सूंड से एक कंकड की तरह हटा दिया। फिर गुफा के अन्दर चला गया। इसके बाद थोड़ी ही देर में रत्नाभूष्णों के बण्डलों को अपनी सूंड से उठा लाया और सौदामिनी के सामने ढेर लगाया। चन्द्रहार और मालाएँ उसके गले में पहना दीं, इसके बाद उसकी पीठ ऐसा फेरा जैसे एक पिता अपनी बेटी की पीठ पर प्यार से थप-थपी देता है। बाकी गहने पहन कर बचे गहनों को बांध कर घर ले जाने केलिए हाथी ने इशारे से सौदामिनी को बतला दिया।

सौदामिनी जब गहने पहन कर तैयार हो गई तब हाथी ने उसे जंगल पार करा कर कल्याणी नगर के समीप छोड़ दिया और फिर से वह जंगल की ओर लौट पड़ा।

सोने की मूर्ति जैसे सोने के आभूषणों से लदकर चमकने वाली अपनी बहू को देख कलह कंठी चकित रह गई, फिर संभल कर उन गहनों को पाने का तरीक़ा सौदामिनी के मुँह से कहलाया, मन ही मन गुनगुनाने लगी–'ओह, हाथी को कैथे के फल इतने प्यारे हैं। "फिर क्या था, वह उसी वक़्त हाट में जाकर थैले भर कैथे खरीद लाई।

गहने भर कर लाने केलिए कलह कंठी ने एक बोरा आपने कंधे पर डाल लिया और एक हाथ में कैथे की थैली लेकर जंगल की ओर खुशी के साथ चल पड़ी। जँगल में पहुँच कर उसने सारे प्रदेश को छान

डाला कि कहीं उसे कैथ का पेड़ दिखाई दे, मगर उसे कहीं कैथे का पेड़ दिखाई नहीं दिया। आखिर एक इमली के पेड़ के नीचे लुढ़क पड़ी, खाने के लिए थैली से एक कैथा निकाला। उसे हाथ में उठाये गला संवार कर भजन-कीर्तन गाने लगी–

"हाथी-हाथी आ जाओ।
कैथे के फल खाते जाओ।
गहने सोने के लेते आओ।
साध मेरे मन की पूरी करते जाओ।
हाथी-हाथी आ जाओ।
जल्दी-जल्दी आ जाओ॥

कलह कंठी गाती जाती थी, पर हाथी न आया, बल्कि जंगल को गुंजाते हुए भयंकर ध्वनि सुनाई दी। कलह कंठी ने सोचा कि शायद यही हाथी का चींकार है। उसने गर्दन लंबी करके देखा, एक बाघ छलांग मारते उसी ओर चला आ रहा था।

अपने कंधे पर के बोरे को छोड़े बिना भागते-भागते नीचे गिर पड़ी। क़िस्मत की बात थी कि वह ठीक गुफा के सामने जा गिरी थी। अपनी क़िस्मत पर फूले न समाते हुए वह गुफा के भीतर चली गई।

गुफा के अन्दर गहनों के ढेर के ढेर देख पागल की तरह वह सारे गहने पहनती गई। गहनों से बोरा भर दिया, उसे बड़ी मुश्किल से ढोते हुए गुफा के फाटक के पास पहुँची, लेकिन दुर्भाग्य से गुफा का फाटक बंद था। सामने चमकनेवाली लाल-लाल आँखों से घूरते अंधेरे में एक ब्रह्म राक्षसी खड़ी थी। उस के दांत बाहर निकल आये थे, वह अट्टहास कर रही थी।

राक्षसी गुफा को कंपाते हुए गरज उठी– "ओह कलह कंठी, तुम अपनी बहू को सताने वाली सास हो तो मैं सास को सता कर खा गई बहू हूँ। मेरी कहानी सुनो!" इन शब्दों के साथ राक्षसी ने अपना वृत्तांत सुनाना शुरू किया।

"मैं पहले एक बड़ी रुपवती थी। माँ-बाप ने मेरा नामकरण कलहंसी किया था। मगर ससुराल में जाने के बाद मैं अपनी

वाचालता से उस सारे मुहल्ले में कलह दुंदुमी नाम से मशहूर हो गई।

कलह कंठी, तुम जितनी क्रूर हो, मेरी सास उतनी मात्र में साधु प्रकृति की है। वह एक दम साध्वी है।

कलह कंठी व कलह दुंदुभी की कहानी

मेरे ससुराल में जाने के बाद एक साल के अन्दर मेरे पति घर छोड़ कर देशाटन पर चले गये। इस बात से तुम अंदाजा लगा सकती हो कि मैं कैसी उत्तम नारी हूँ। मैं आभूषणों पर जान देती हूँ। सोना उगने वाले अच्छे खेतों और वनों को बिकवा कर मैंने गहने बनवा लिये। मेरी सास ने नाक के बेसर से लेकर सारे गहने मुझे दे दिये।

ऐसी भोली भाली और उत्तम स्वभाव वाली सास को मैं ने एक जून भी ठीक से खाने नहीं दिपा। दुबली-पतली व कमजोर बूढी सास से मैं ने घर की चाकरी करवाई।

आखिर मेरे सास-ससुर मेरी करनी से ऊब गये। वातापि क्षेत्र में जाकर विघ्नेश्वर के दर्शन करके वहीं पर अपना देह त्याग करने के ख्याल से घर से चल पड़े। मेरी सास के हाथ में छोटी सी गठरी देख मैं ने जबर्दस्ती उसे खींच लिया, जिससे वह लुढक कर गिर पडी और हांफते उसने सदा के लिए वहीं पर अपनी आंखें मूंद ली।

मेरे ससुर बड़ी सहनशीलता के साथ मेरे दुर्व्यवहारों को देखते हुए चुप रहें, मगर उस दिन वे बड़े दुखी हुए और गुस्से में आकर बोले—"अरी दुष्टे, तुम मेरी बहू हो। वरना मैं इसी वक़्त तुम को शाप देता। इस ख्याल से हम तुम्हारे सारे दुर्व्यवहारों को सहते रहे कि हमारा इकलौता बेटा कभी न कभी लौट आएगा और तुम उसको सुखी रखोगी। मैं आख़िरी बार तुमसे यही चाहता हूँ कि मेरा बेटा कभी लौट आएगा तो उसकी अच्छी तरह से देखभाल करो।" यों समझाते मेरे ससुर ने वहीं पर अतिशय दुख के मारे अपने प्राण त्याग दिये, और अपनी पत्नी के साथ सहगमन

किया। वे बड़े ही निष्ठावान पुरुष और तपस्वी थे।

उसी वक़्त वहाँ पर एक सन्यासी आया, वह मेरे सास-ससुर की मृत देहों पर गिर कर रोने लगा। इस के बाद मैं ने अपनी सास के हाथ से जिस गठरी को खींच लिया था, उसे खोला। उस के भीतर दो-चार चीथड़े मात्र थे।

उस सन्यासी ने मेरी तरफ़ अपनी लाल-लाल आँखों से देख कर कहा—"तुम्हें तो एक ब्रह्मराक्षसी के रूप में पैदा होना था।" इस के बाद उस वृद्ध दंपति के अंतिम संस्कार करके वहाँ से चला गया। वह सन्यासी कोई और न था। मेरे रूप-सौंदर्य पर मुग्ध होकर मेरे साथ विवाह करने वाले मेरे पति थे।" यों अपनी कहानी सुना कर थोडी देर रुक गई, फिर शेष कहानी सुनाने लगी: "गहनों के प्रति मेरी आसक्ति और लोभ ने मुझे यहाँ तक प्रेरित किया कि मैं ने कुछ लुटेरों को आश्रय दिया। मैं डाकुओं की रानी कहलाने लगी। इसी गुफा में चोर-डाकू अमूल्य गहने व धन के ढेर लगा देते थे। उस सारी संपत्ति पर क़ब्जा करने के ख्याल से मैं ने उन्हें जहर मिलाया हुआ खाना खिलाया। मरने के पहले उन लोगों ने बदला लेने के ख्याल से मुझे गुफा के अन्दर रख कर भारी चट्टान से इसके द्वार को बंद कर डाला।

कलह कंठी! मैं इसी गुफा में उन गहनों व धन के ढेरों को देखते भूख-प्यास से तड़प-तड़प कर मर गई और पिशाचिनी बन कर पड़ी हुई हूँ। गुफा में प्रवेश करने वाले हाथी ने मुझे बताया कि तुम्हारी आँखें खुलवाने पर मैं पिशाचिनी के जन्म से मुक्त हो जाऊँगी।

हाथी ने तुम्हारी बहू को जो गहने दिये, वे सब खरे सोने के थे, मगर तुमने जो गहने पहन लिये हैं और बोरे में बांध लिये है, वे असली हैं या नकली हैं, एक बार अच्छी तरह से देख तो लो।" ब्रह्म राक्षसी ने कहा।

कोई बुरा न होगा, बरना इस गुफा में मेरे जैसे ब्रह्मराक्षसी बनकर पड़ी रहने की बारी तुम्हारी होगी। कलहकंठी, कान खोल कर सुन रही हो न?" कलह दुंदुभी ने कहा।

इस पर कलहकंठी ने अपने कान पकड़ लिये। राक्षसी को प्रणाम करके विनयपूर्वक गिड़गिडाने लगी–"मेरी अक़्ल ठिकाने लग गई है। मैं आज से अपनी बहू के साथ अच्छा व्यवहार करूँगी। मुझे गुफा से मुक्त करके जंगल पार करादो।"

ब्रह्मराक्षसी ने कलह कंठी को जंगल पार कराकर कल्याणी नगर की सीमा पर पहुँचा दिया, तब उसने चेतावनी दी–"सुनो, तुम अपना वचन भंग करोगी, तो ब्रह्म पिशाचिनी बन कर इसी गुफा में रह जाओगी, खबरदार।" इसके बाद वह जल कर भस्म हो गई।
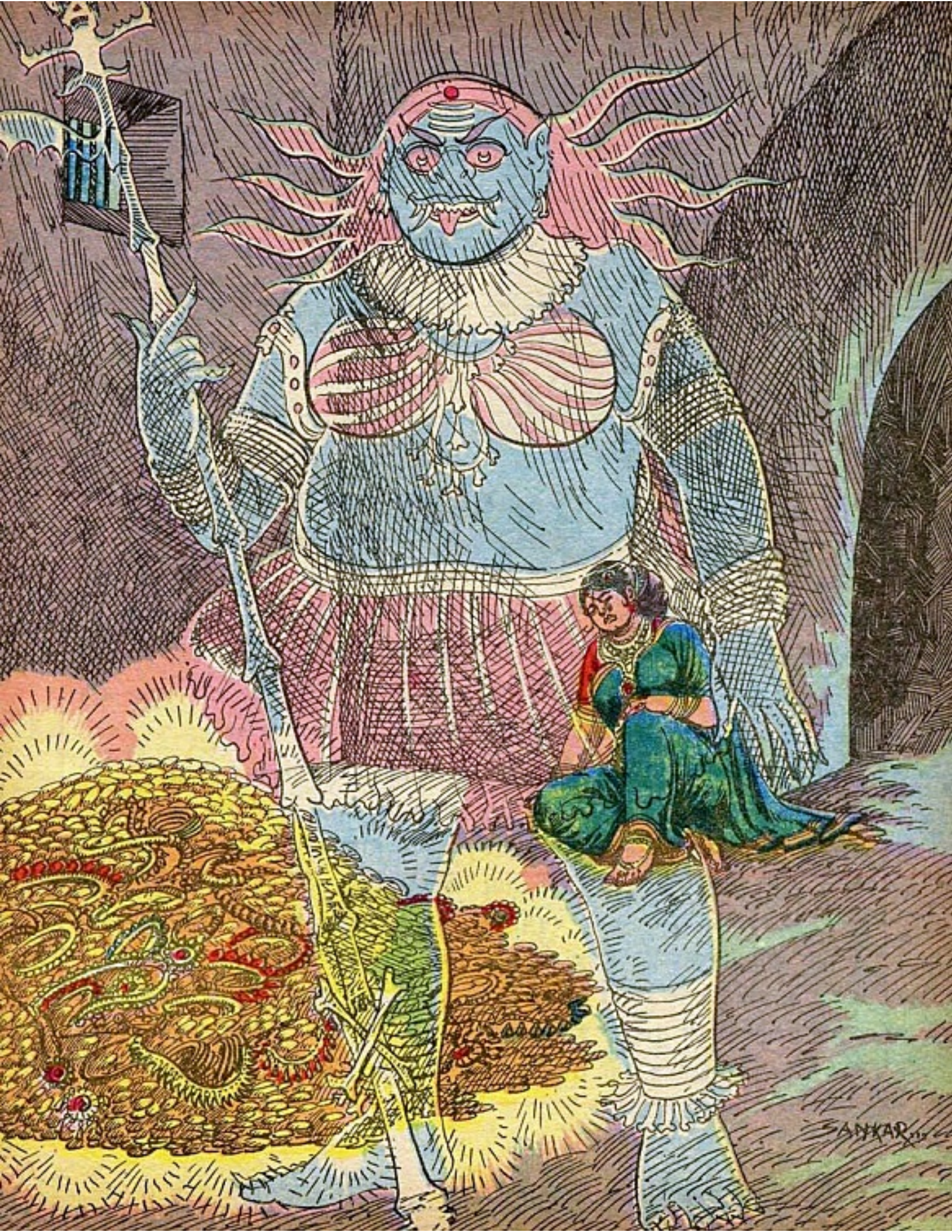
इस बीच बोरे का मुंह खुल गया और उसके भीतर से साँप-बिच्छू नीचे गिरे, गुफा के चारों तरफ़ रेंगने लगे।

अपने बदन पर साँप और बिच्छुओं के रेंगते देख कलह कंठी दहाड़े मार कर रोने लगी। उसकी आवाज़ से गुफा गूंज उठी। ब्रह्मराक्षसी ठहाके मार कर हँसते हुए बोली–" तुम अपनी बहू के साथ अत्याचार करने वाली कलह कंठी हो। मैं सास ससुर को सताने वाली कलह दुंदुभी हूँ हमारी जैसी औरतों की वजह ये नारी जाति पर अमिट कलंक लगता जा रहा है। उत्तम स्वभाव वाली तुम्हारी बहू के साथ तुम अच्छा व्यवहार करोगी तो तुम्हारा

कलहकंठी दौड़कर अपने घर पहुँची, सौदा मिनी के सामने घुटने टेक कर बोली–"बेटी, सौदामिनी। मुझे माफ़ कर दो। बेटे और बहू को तोते-मैने की तरह रहते देख कर खुश होने से बढ़ कर मुझे और क्या सुख चाहिए?"

सौदामिनी यह सोच कर बहुत खुश हुई कि विघ्नेश्वर की कृपा से उस की सास का हृदय-परिवर्तन हो गया है।

इसके बाद कलह कंठी फिर से पहले की तरह कलकंठी कहलाई।

पावन मिश्र ने कहानी समाप्त कर के पूछा–"बच्चो, बताओ, हाथी कौन है ?" इस पर बच्चों के साथ बड़े लोग भी उत्साह में आकर बोल उठे–"विघ्नेश्वर। हमारे विघ्नेश्वर।" इन शब्दों के साथ सब उठ खड़े हुए और प्रसाद लेकर अपने-अपने घर चले गये।

पावन मिश्र प्रति दिन मंदिर की दीवारों पर अंकित चित्रों से संबंधित कहानियाँ सुनाया करता जिस से बच्चे व बड़ों के मन में विघ्नेश्वर के प्रति विशेष श्रद्धा और भक्ति बढ़ती गई।

एक दिन एक संगीत प्रेमी ने एक भित्ति चित्र की ओर इशारा करके पूछा, जिस में एक गायक तंबूरा बजाते गा रहा था और विघ्नेश्वर विभिन्न भंगिमाओं में नृत्य कर रहे थे, उस चित्र की कहानी सुना दे।

पावन मिश्र ने यों शुरु किया–"वातापि नगर कलाओं का केन्द्र था जहां पर कवि, पंडित, गायक और विद्वान अधिक संख्या में बसे थे।

गजानन पंडित नगर का श्रेष्ठ पंडित था, और बहुमुखी प्रतिभा का धनी भी। उस के कंठ में एक प्रकार की सम्मोहन शक्ति थी। वह वातापि गणपति पर असंख्य कीर्तन रच कर स्वयं गाया करता था। उसका नाता बाल गणेश भट्ट सर हिलाते ताल देता था।
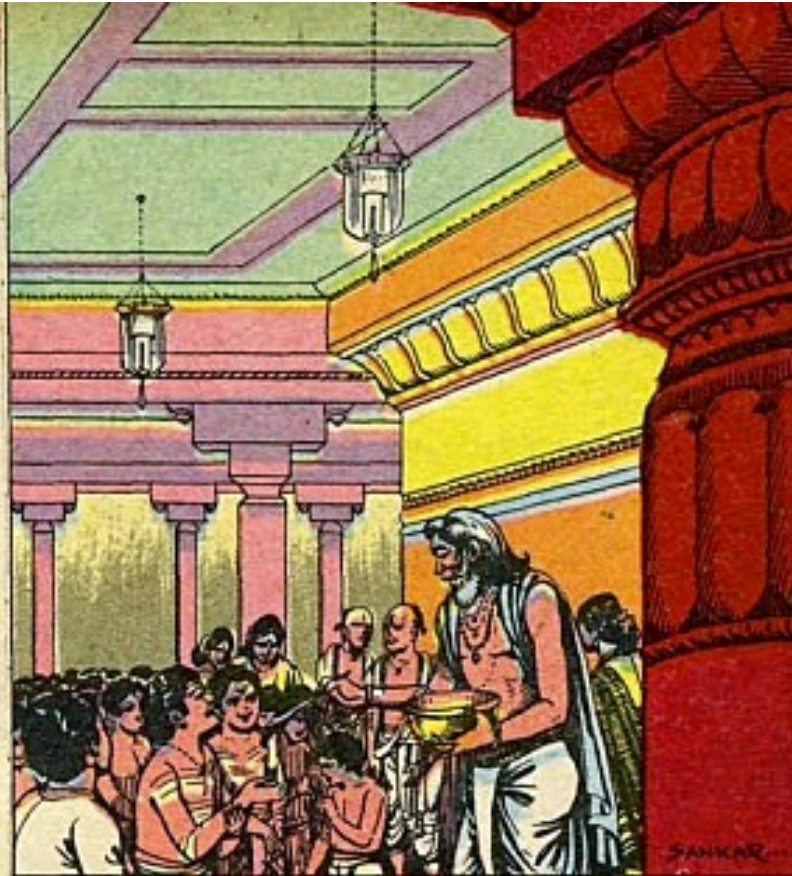
गजानन पंडित मधुर स्वर में धिमिकिट धिमिकिट तांडव नृत्य करी गजानन' नामक पल्लवि पर राग बदलते गाता जाता था, इस पर गजानन बने विघ्नेश्वर इंद्र धनुषी रंगों में अनेक स्वरूप बदलते नाचते श्रोताओं तथा दर्शकों को मुग्ध बनाये हुए थे।

विघ्नेश्वर हंस ध्वानि के राग में सफेद राज हंस के जैसे, माया मालव राग में प्रातः कालीन रवि बिंब जैसे, भैरवी राग में लाल कमल जैसे, हिंदोल राग में नीलाकाश की भाँति, नीलांबरी राग में नीले कुमुद जैसे

आनंद भैरवी राग में सफ़ेद कुमुदों पर शोभायमान पूर्णिमा की चांदनी 'जैसे दिखाई देते थे।

वैसे गजानन पंडित सत्कार और सम्मान पाने के पीछे पागल न था, मगर फिर भी उसे सब से बड़ा सम्मान सोने की गणेश की प्रतिमा हर साल समर्पित की जाती थी। उन प्रतिमाओं से उसका घर भर गया था।

देश के महान विद्वान भी गजाननपंडित के प्रति अपार आदर और गुरुभाव रखते थे। मगर वातापि नगर के कुछ विद्वानों के मन में उसके प्रति ईर्ष्या बढ़ती गई। उन का नेता स्वरकेसरी था।

स्वर केसरी सदा अपनी विद्वत्ता का परिचय देने को लालायित रहा करता था। अगर वह अपना कंठ खोलता तो सिंह गर्जन ही सुनाई देता। वह इस तरह गाता कि मृदंग बजाने वाला परेशान हो उठता। पर गजानन पंडित के मन में अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन करने की कोई कामना न थी, वह विघ्नेश्वर के प्रति श्रद्धा व भक्ति से प्रेरित हो तन्मयावस्था में गाते-गाते कभी कभी मूक हो जाता था। ऐसे संदर्भों में स्वर केसरी वगैरह पंडितों को गजानन पंडित की आलोचना करने का अच्छा मौक़ा मिल जाता था।

वे कहा करते थे कि गजानन पंडित शास्त्र का ज्ञान नहीं रखता है, उस का संगीत केवल मनोधर्म संगति है, संयोग से प्राप्त संगीत है, यों कहकर वे लोग संतोष की सांस लेते थे। पर गजानन इस बात की बिलकुल परवाह नहीं करता था। अपने मन में रमे विघ्नेश्वर के साथ एकांत में वार्तालाप करते गाया करता था। उस के गायन में कोई अनिर्वचीय शक्ति थी जो श्रोताओं को भुलावे में डाल कर दिव्य लोकों के आनंद सागर में डुबो देती थी।

उस वर्ष किसी भी हालत में गणेश की स्वर्ण प्रतिमा गजानन पंडित के घर न पहुँचे, यों विचार करके स्वर केसरी ने सोच-समझकर एक बड़ी भारी योजना बनाई।

गंधर्व राजकुमारी

[१०]

नूरल हुदा ने एक-एक करके अपनी पांच बहनों को अंदर बुलाया, हसन को दिखाया; पर सब के प्रति हसन ने वही जवाब दिया, जो पहले दिया था। अब सिर्फ़ हसन की बीबी बची थी उसको भी अपने सामने हाजिर करने के लिए नूरल हुदा ने बूढ़ी को हुक्म दिया। आखिर गंधर्व चक्रवर्ती की आखिरी बेटी अन्दर आ गई। उसे देखते ही हसन जोर से चीखकर नीचे गिर पड़ा। हसन की बीबी भी उसे पहचान कर गद्दी के पास बेहोश हो गिर पड़ी।

नूरल हुदा ईर्ष्या से भर उठी, उसने अपनी नौकरानियों को आदेश दिया— "इस आदमी को पकड़ ले जाकर नगर के बाहर फेंक दो।" नौकरानियों ने हसन को ले जाकर समुद्र के किनारे फेंक दिया।

हसन की बीबी जब होश में आई, तब नूरल हुदा ने कहा—"अरी बेशर्म! उस मनुष्य के साथ तुम्हारा कैसा संबंध है? पिताजी की जानकारी के बिना तुम उसकी बीबी बन गई और उसे छोड़ आई हो? इस तरह तुम न घर की और न घाट की रह गई। तुमने अपने वंश पर जो कलंक लगाया, उसे तुम्हारे खून से धोना पड़ेगा!" फिर नौकरानियों को ओर मुड़कर नूरल ने आदेश दिया— "इस दुष्ट औरत को एक खूंटे से बांध कर तब तक पीटो, जब तक इसके बदन से खून के फौव्वारे न छूटे।".

इसके बाद नूरल ने अपने पिता के नाम एक खत लिखा। उस में अपनी छोटी बहन का सारा किस्सा बयान किया, उसे दिये जाने वाले दण्ड का ज़िक्र कर उसे

अमल करने की अनुमाति माँगी, एक दूत के द्वारा वह खत अपने पिता के पास भेजा।

उस खत को देखते ही चक्रवर्ती की आँखों के सामने अंधेरा छा गया। फिर भी उस खत के जवाब में चक्रवर्ती ने यों कहला भेजा–"तुम्हारी छोटी बहन ने जो पाप किया है, उस के लिए जो भी सजा दी जाय, थोड़ी ही होगी। उसे मौत की सजा किस रूप में दी जाय, यह तुम्हीं निर्णय करके अमल करो।"

हसन जब होश में आया, तब उसने अपने को समुद्र के किनारे पाया। अब उसके दिल में कोई इच्छा न थी, वह पागल की तरह उठ खड़ा हुआ और चलता बना। एक जगह उसने देखा कि बारह साल की लड़कियाँ एक टोपी को लेकर झगड़ रही है। वह टोपी चमड़े की बनायी थी और उस पर कोई लिखावट और कारीगरी थी। हसन ने उन लड़कियों को अलग करते हुए पूछा–"तुम दोनों लड़ती क्यों हो?"

लड़कियाँ दर असल टोपी को लेकर लड़ रही थीं; दोनों यही कह रही थीं कि इस टोपी को पहले मैंने देखा, इसलिए यह मुझे मिलनी चाहिए। हसन ने उन्हें समझाया–"मैं तुम्हारे झगड़े का फैसला करूंगा! मैं एक पत्थर जोर से दूर फेंक देता हूँ। तुम में से जो दौड़कर पहले ले आएगी, यह टोपी उसी की होगी! ठीक है न?" इस शर्त को दोनों लड़कियों ने मान लिया।

हसन ने सारी ताक़त लगाकर एक पत्थर फेंका। दोनों लड़कियाँ दौड़ गईं। उनके लौटने तक हसन टोपी अपने सर पर रखकर वहीं खड़ा रहा। जल्द ही दोनों लड़कियाँ लौट आईं। एक लड़की के हाथ में पत्थर था–"लो, मैं जीत गई, बताओ, तुम कहाँ हो?" एक लड़की ने हसन को संबोधित कर पूछा। दोनों लड़कियों को उसकी खोज करते हसन अचरज में आ गया। वह मन में सोचने लगा–"ये तो अंधी लड़कियाँ नहीं हैं, क्यों

इस तरह मेरे वास्ते चारों ओर ताक रही हूँ? मैं तो यहीं पर हूँ।"

यों सोचकर उसने चिल्लाकर कहा– "मैं तो यहीं पर जो हूँ!"

जिस दिशा से पुकार आई, दोनों लड़कियों ने उस दिशा की ओर देखा, पर वहाँ कुछ न पाकर डर के मारे रोने लगीं। इस पर हसन ने उन्हें छूकर पूछा–"तुम दोनों रोती क्यों हो?" इस पर वे और डर गईं और वहाँ से भाग गईं।

हसन सोचने लगा–"यह तो कोई जादू की टोपी मालूम होता है? शायद इसको सर पर रखने से कोई गायब हो जाता है! अब वह गुप्त रूप से जाकर अपनी बीबी को देख सकता है!" उसके मन में खुशी के मारे नाचने की इच्छा हुई। तुरंत वह नगर की ओर चल पड़ा और बूढ़ी दासी की खोज करने लगा। वह कमरे में रस्सों से बंधी पड़ी थी। उसने अपने अदृश्य रूप की जाँच करने के ख्याल से उस कमरे में रखी एक झारी को उठा कर फर्श पर दे मारा। बूढ़ी ने इधर-उधर नज़र दौड़ाकर देखा, किसी को न पाकर वह मारे डर के चिल्ला उठी–"अरी, शैतान, तू कौन है?"

"मैं शैतान नहीं हूँ, बल्कि हसन हूँ! तुम को छुड़ाने आया हूँ।" यों कहते उसने सर पर से टोपी निकाली।

"बेटा हसन, हमारी रानी ने तुम को प्राणों के साथ छोड़ दिया था, इस पर पछताते हुए उन्होंने तुम्हें पकड़ लाने के वास्ते नारी सैनिकों को भेजा है; इसलिए तुम जल्दी यहाँ से भाग जाओ।" बूढ़ी ने समझाया। इसके बाद उसने हसन को यह खबर भी दी कि उसकी बीबी को कैसी सजा दी जानेवाली है।

"नानीजी, मेरी, बीबी की और तुम्हारी भी रक्षा खुदा करनेवाले हैं। इस टोपी को तो देखो यह जादू की है? इसे सर पर रख कर मैं जहाँ चाहूँ, पहुँच सकता हूँ! मुझे कोई देख नहीं सकता!" हसन ने कहा।

अपने पति को देखते ही उसके हाथों में ही बेहोश हो गई ।

हसन ने अपनी बीबी के बंधन खोल दिये और बूढी की मदद से उसे होश में लाया, फिर उसका उपचार करने लगा । उसने धीरे से आँखें खोल कर कहा— "मैं नहीं जानती कि तुम आसमान से उतर आये हो, या जमीन से ऊपर निकल आये हो, तुम मुझ को अपनी क़िस्मत पर छोड़कर यहाँ से भाग जाओ। क़िस्मत को कौन टाल सकता है? मेरी दीदी मुझे सतायेगी, उसे तुम देख नहीं सकोगे ।"

यह जवाब पाकर बूढी खुशी से फूली न समाई । बोली—"मुझे पहले इन बंधनों से छुड़ा दो । मैं तुम्हें तुम्हारी बीबी को दिखला दूँगी ।" इस पर हसन ने बूढी के बंधन खोल दिये । दूसरे ही क्षण वह भी हसन के साथ गायब हो गई ।

इसके बाद बूढ़ी उसे एक अंधेरी कोठी के पास ले गई। हसन की बीबी उसी में बंदी थी। पहले हसन ने सोचा कि अचानक उसके सामने जाकर उसे घबड़ा देना नहीं चाहिए, फिर भी उसकी बुरी हालत को देख वह सहन न कर पाया, अपने सर पर से टोपी हटाकर उसे अपने गले से लगा लिया। वह औरत

"पगली, मैं तुम को बगदाद ले जाने के लिए यहाँ पर आया हूँ!" हसन ने धीरज बंधाया ।

"तुम इस पागलपन की हालत में भी हिम्मत हारते दिखाई नहीं देते!" हसन की बीबी बोली ।

"तुम्हें और इस बूढ़ी को अपने साथ ले जाये बिना मैं इस कोठी से बाहर निकल नहीं सकता । इस टोपी को तो देखो ।" इन शब्दों के साथ उसने जादू की टोपी का करिश्मा दिखाया ।

हसन की बीबी खुशी और पछतावे के साथ आँसू बहाते बोली—"तुम्हारी इन सारी तक़लीफ़ों की वजह मेरे द्वारा बगदाद

से भाग कर आना ही है! मैं अपनी गलती को महसूस करती हूँ; इसलिए मुझे गाली मत दो।"

"नहीं, नहीं! तुमको अपने साथ लिए बिना बगदाद में छोड़कर चले जाना ही मेरी गलती है! आइंदा मैं कभी ऐसा काम न करूँगा।" हसन बोला।

इसके बाद हसन ने सर पर टोपी धारण कर एक हाथ में पत्नी को और दूसरे हाथ में बूढ़ी को पकड़ लिया, इस पर वे तीनों गायब हो गये। उस हालत में वे राज महल से निकल आये, तब वे उस जगह पहुँचे, जहाँ पर हसन की बीबी ने अपने बच्चों को छुपाकर रखा था। नासिर और मन्शूर को देखते ही हसन का दिल उमड़ पड़ा।

बूढी ने दोनों बच्चों को अपने कंधों पर चढ़ा लिया। इस बीच हसन की बीबी अदृश्य रूप में जाकर पक्षी के तीन खोल चुरा ले आई। तीनों बड़े लोग उन्हें धारण कर बच्चों को साथ ले उन भयंकर वाक्-वाक् द्वीपों से हमेशा के लिए उड़कर चले गये।

बराबर उड़ते वे लोग बगदाद में हसन के घर पर उतर पड़े। धीरे से नीचे उतरकर हसन की माँ के पास पहुँचे। वह पहले ही बूढ़ी थी, तिस पर रो-रोकर उसकी दृष्टि और मँद पड़ गई थी। वह अनाथ बूढ़ी अपनी अंतिम घड़ियाँ गिन रही थीं। हसन ने उसके कमरे के किवाड़ों पर दस्तक देकर पुकारा–"माँ, दर्वाजा खोल दो। एक खुश खबरी लाया हूँ।" यह पुकार सुनते ही बूढ़ी की जान में जान आ गई, दौड़कर आई, दर्वाजा खोला। सामने अपने पुत्र, बहू, पोतों और बूढ़ी को देख अतिशय आनंद के मारे बेहोश हो गई।

हसन अपनी माँ का उपचार करके उसे होश में लाया। उसकी बीबी ने बूढ़ी से माफ़ी माँगी। तब हसन ने सारी अनोखी घटनाएँ अपनी माँ को सुनाया उस दिन से सब लोग आराम से अपना समय काटने लगे। (समाप्त)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अक्तूबर १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

T. Narasimha Rao

★

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : हम दोनों का आपस में प्यार!

द्वितीय फोटो : शेर देख रहा शिकार!!

प्रेषक : विनोद कुमार रैना, गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रेस के पीछे, रीवा (म. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६
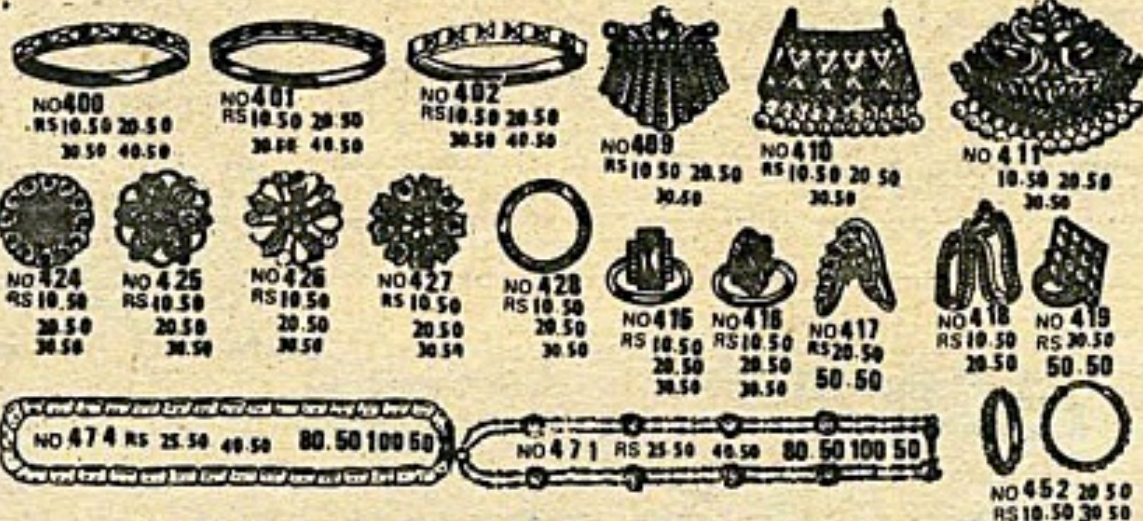
पुरस्कार जीतिए
कॅमल
पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (२) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र

बिन्दुपूर्ण रेखा के साथ काटिये
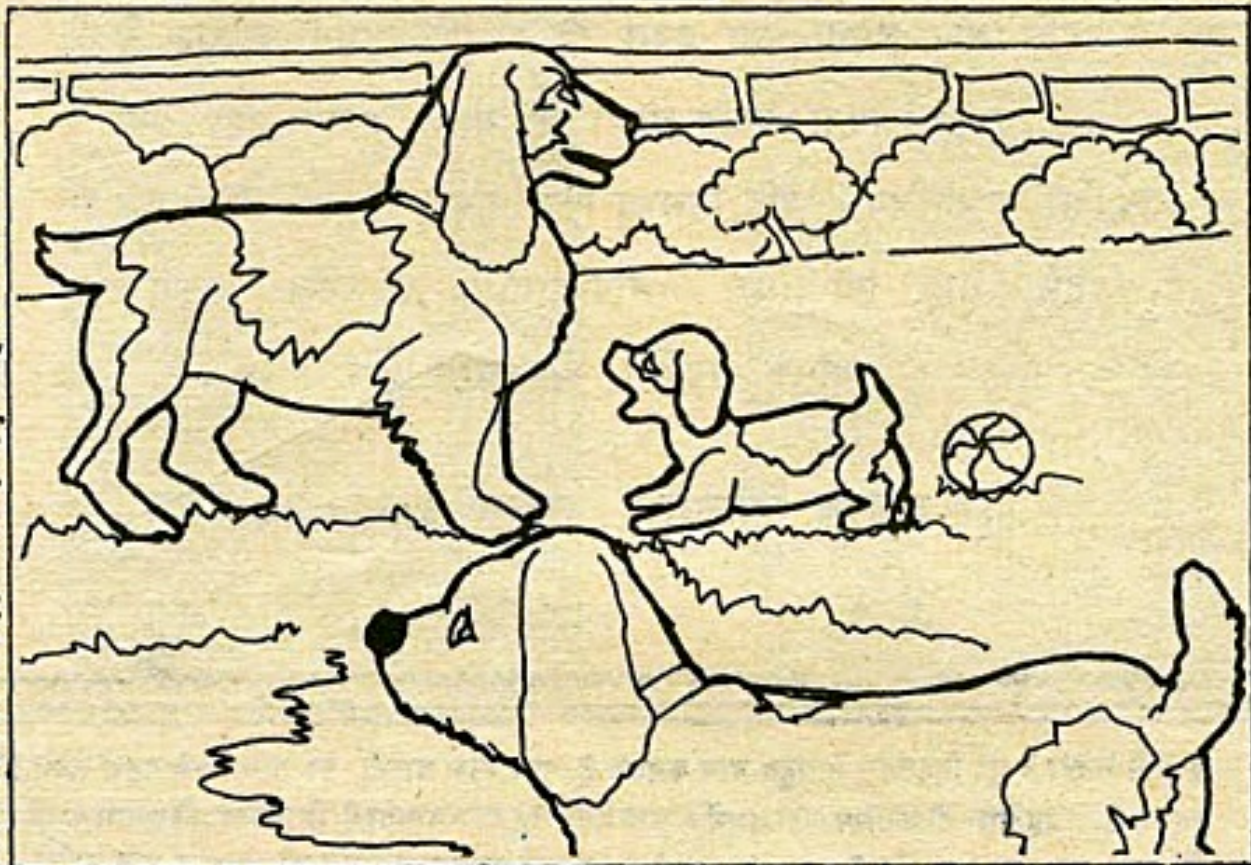
इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ६६२८, कुलाबा, बम्बई ४०० ००५.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

नाम .... उम्र ....

पता ....

.... **CONTEST NO 25**

प्रवेशिकाएं *31.8.1982* से पहले पहले भेजी जायें.

Vision HIN

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 24 (Hindi)

1st Prize: Pushkal Kumar, Gorakhpur. *2nd Prize:* Surjeet Kaur, Karnal. *3rd Prize:* Nanda Pundlikrao Nimje, Thana. *Consolation Prizes:* Nilesh R. Jagirdar, Ujjain. M. Bhagiavathy, Durg. Nitesh K. Soni, Kota-324 006. Amarendra Ku. Patnaik, Balasore. Mancj Kumar Sinha, Patna city.

बच्चों के लिए चन्दामामा की एक और भेंट-

नया हिन्दी पाक्षिक

7017-HN

एक अनोखी नगरी की सैर!

अब बच्चों का प्यारा मासिक "चन्दामामा" अपना नया हिन्दी पक्षिक पेश करता है- "चन्दामामा क्लासिक्स् और कामिक्स्"। मनोरंजक, दिलचस्प, रंग-बिरंगे पन्ने, केवल २-०० रुपये में। वार्षिक शुल्कः सिर्फ ४८ रुपये। अपने निकट के समाचारपत्र-विक्रेता से पूछिये या आज ही इस पते पर लिखिए :

डाल्टन् एजन्सीस्
चन्दामामा बिल्डिंग्स्
आरकाट रोड, मद्रास -६०० ०२६.

महीने में दो बार!

वॉल्ट डिस्नी की
विचित्र पुरी

कॉमिक्स जगत् को एक नयी देन

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 1982 Regd. No. M. 5452